बिहार में शक्ति-साधना

उत्तरार्द्ध खण्ड

बिहार-प्रदेश के देवी-मन्दिर

भगवती दुर्गा एवं सप्तशती

सम्बन्धी

श्रेष्ठ पुस्तकें

१ सार्थ चण्डी (श्रीदुर्गा सप्तशती) ७५-००

'गुप्तवती', 'शान्तनवी'आदि प्रसिद्ध संस्कृत टीकाओं के आधार पर हिन्दी में पहली बार दुर्गा।सप्तशती के प्रत्येक श्लोक की विस्तृत व्याख्या

२ विशुद्ध चण्डी श्रीदुर्गा (सप्तशती) ८-००

वर्षों के शोध द्वारा संशोधित 'चण्डी-पाठ'

३ सप्तशती-सूक्त-रहस्य ३०-००

सप्तशती की पाँच महत्त्व । पूर्ण स्तुतियों की ज्ञान। दायिनी व्याख्या

४ सप्तशती-रहस्य ५-००

५ श्रीदुर्गा-कल्पतरु १५-००

भगवती दुर्गा विषयक उपयोगी निबन्ध।संग्रह

६ श्रीदुर्गा-स्तव-मञ्जरी २०-००

भगवती दुर्गा के स्तोत्रों का संग्रह

७ भगवती दुर्गा के सहस्रनाम १०-००

भगवती दुर्गा के १००८ नामों की व्याख्या

बिहार में शक्ति-साधना

(उत्तरार्द्ध खण्ड)

बिहार-प्रदेश के देवी-मन्दिर

सम्पादक

'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल, एम० ए०

श्री ऋतशील शर्मा, एम० ए०

प्रकाशक

पं० देवीदत्त शुक्ल स्मारक

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

प्रयाग-६

मन्दिर

मूल्य १०/-

प्रकाशक
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
अलोपी देवी मार्ग
प्रयाग-राज २११००६ (उ. प्र.)

दूर-भाष : (०५३२) ६६२७८३

द्वितीय संस्करण

सर्वाधिकार सुरक्षित

'शिव-रात्रि', 'सर्व-धारी' सं० २०५२ वि०–१७ फरवरी, १९९६

मूल्य १०० रु०

मुद्रक
परा वाणी प्रेस
अलोपी देवी मार्ग
प्रयाग-राज २११००६ (उ. प्र.)

अनुक्रम

दो शब्द [पाँच]

१ पटना नगर की अधिष्ठात्री—श्रीपटन देवी १

२ भगवती पट्टनेश्वरी ३

३ पटना, भिखना पहाड़ी पर अवस्थित—श्रीमङ्गला गौरी ७

४ माँ काली का दर्शनीय मन्दिर १०

५ बिहियाँ [भोजपुर] की महथिन देवी ११

६ दीघवारा का सिद्ध श्रीअम्बिका-पीठ १२

७ रोहतास के प्राचीन मन्दिर १४

८ श्रीचण्डी-स्थान विराटपुर १६

९ मुङ्गेर के देवी-मन्दिर १८

[१ श्रीचण्डी मन्दिर, २ बड़ही की श्रीबाला त्रिपुरसुन्दरी]

१० राँची के मुख्य देवी-मन्दिर २०

[१ श्रीछिन्नमस्ता मन्दिर, २ नार का श्रीतारा मन्दिर, ३ श्रीदुर्गा मन्दिर]

११ चम्पारण के प्रमुख देवी-स्थान २२

[श्रीवैराटी देवी, २ श्रीचण्डी स्थान, ३ श्रीसहोदरा स्थान]

१२ मधुबनी के प्रसिद्ध देवी-मन्दिर २३

[१ श्रीदुर्गा स्थान, २ श्रीभद्रकाली मन्दिर, ३ श्रीदुर्गा शक्ति-पीठ, ४ श्रीमाई स्थान, ५ श्रीदुर्गा मन्दिर, ६ भगवती शाकम्भरी, ७ भगवती राज-राजेश्वरी, ८ सिद्धकाली पीठ, ९-१२ श्रीकाली मन्दिर, १३ श्रीतारा मन्दिर]

चार : बिहार-प्रदेश के देवी-मन्दिर

१३ सहरसा के प्रसिद्ध शक्ति-पीठ २५

[१ भगवती उग्रतारा मन्दिर, २ चण्डिका मन्दिर, ३ कात्यायनी मन्दिर, ४ कङ्काली मन्दिर, ५ दश महा-विद्या मन्दिर, (प्रथम, द्वितीय), ६ दुर्गा मन्दिर, ७ वन-दुर्गा मन्दिर]

१४ दरभङ्गा के प्रसिद्ध देवी-स्थान २७

[१ श्रीश्यामा मन्दिर, २ श्रीचामुण्डा स्थान, ३ श्रीम्लेच्छ-मर्दिनी भगवती, ४ श्रीअहल्या स्थान, ५ श्रीतारा स्थान]

१५ पूर्णिया के देवी-मन्दिर २८

[१ भगवती पूरण देवी, २ श्री दक्षिणा कालिका मन्दिर, ३ श्रीदुर्गा स्थान]

१६ भभुआ की श्रीमण्डलेश्वरी देवी २९

१७ मुजफ्फरपुर का त्रिपुर-सुन्दरी-मन्दिर २९

१८ वासुकिनाथ का श्रीतारा-मन्दिर ३०

१९ नालन्दा का श्रीचण्डी-स्थान ३०

२० सासाराम के देवी-मन्दिर ३१

[१ भलुनी क्षेत्र की अधिष्ठात्री श्रीयक्षिणी देवी, २ सहसराम की श्रीतारा चण्डी]

२१ आरा के देवी-मन्दिर ३२

[१ आरा की अरण्य देवी, २ मसाढ़ का देवी मन्दिर, ३ बाबू बाजार की दक्षिण कालिका, ४ मैधरा की काली देवी]

२२ गोपालगञ्ज की सिंहासिनी देवी ३५

२३ माँ काम-चारिणी ... ३५

२४ माँ लिलौरी ... ३७

२५ पूर्णिया की पूरण देवी ... ३९

२६ श्रीबगला-स्थान : गया ... ४१

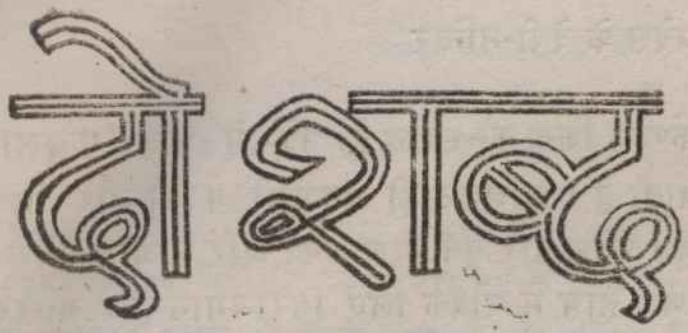

बिहार में शक्ति-साधना

बिहार की भूमि में शक्ति-उपासना वैदिक काल से ही नहीं, अपितु आदि-काल से होती आ रही है। इस पावन भूमि में शक्ति के तीन प्रसिद्ध स्थल आज भी अपनी महिमा से धरा को गौरवान्वित कर रहे हैं, जो केवल लोक-मानस से मान्य हैं। उनका पौराणिक आधार ज्ञात नहीं। तीन प्रसिद्ध शक्ति-पीठ, जिनका पौराणिक आधार ज्ञात है, वे हैं—१ सर्व-मङ्गला, २ रज-रप्पा और ३ अम्बिका।

(१) सर्व-मङ्गला-पीठ

'सर्व-मङ्गला-पीठ' प्रसिद्ध पितृ-तीर्थ 'गया' में अवस्थित है। यह पीठ गया से बोध-गया जानेवाले राज-मार्ग है। इसके सम्बन्ध में यह आलेख है कि यहीं सती का स्तन गिरा था। 'देवी-भागवत' में १०८, 'तन्त्र-चूड़ामणि' में ५१ और 'त्रिपुरा-रहस्य' में बारह शक्ति-पीठों का उल्लेख है। तीनों में 'गया' का नाम है। देखिए, 'श्रीललिता-पीठ, प्रयाग', मूल्य ४-०० रु०।

'त्रिपुरा-रहस्य' के अनुसार काञ्चीपुर में 'कामाक्षी', मलय-गिरि पर 'भ्रामरी', केरल में 'कुमारी', गुजरात में 'अम्बा', कर-वीर (कोल्हापुर) में 'महा-लक्ष्मी', उज्जैन में 'कालिका', प्रयाग में 'ललिता', विन्ध्य - गिरि पर 'विन्ध्य-वासिनी', वाराणसी में 'विशालाक्षी', गया में 'मङ्गलावती', बङ्गाल में 'सुन्दरी' और नेपाल में 'गुह्यकेश्वरी'—इन बारह रूपों में पराम्बा भारत में अवस्थित हैं। इन पीठ-स्थानों के दर्शन मात्र से सभी पापों से मुक्ति मिल जाती है।

'सर्व-मङ्गला' शक्ति का प्रधान कार्य है—पालन करना। बच्चा माँ से सदैव आहार की अपेक्षा करता है और उससे सम्बन्धित अङ्ग इसी 'गया-भूमि' पर गिरा। अतः पालन करनेवाला 'सर्व-मङ्गला-पीठ' है। इस पीठ के

निकट ही मार्कण्डेय शिव का स्थान है, जिससे 'सर्व - मङ्गला' की महिमा द्विगुणित हो जाती है। सन्निकट ही चतुर्भुजी काली और छिन्न - मस्ता की प्रतिमाएँ भी हैं। प्रवेश-द्वार पूर्व दिशा की ओर है और प्रवेश - द्वार से सटे सिद्धि-दाता गणेश हाथ में मोदक लिए विराजमान हैं। मन्दिर के ऊपर श्री गजाधर भगवान् की विशाल प्रतिमा है।

सर्व-मङ्गला-पीठ की विशेषताएँ

आश्चर्य-जनक विशेषता इस 'पीठ' की यह है कि मनुष्य अपने जीवन-काल में ही अपना श्राद्ध-कर्म यहाँ सम्पादित कर सकता है। जीवित दशा में अपने श्राद्ध-कर्म का विधान और कहीं नहीं मिलता। इस सम्बन्ध में एक घटना का वर्णन करना यहाँ प्रासङ्गिक ही होगा। हमारे एक मित्र थे बड़े सज्जन और सच्चरित्र। प्रबुद्ध विद्वानों से इस स्थान की महिमा सुनकर उन्होंने अपने जीवन-काल में ही मृत्यु-पश्चात् होनेवाले वैदिक कर्म-काण्ड को यहाँ विद्वानों द्वारा सम्पन्न करवाया और परम सन्तुष्ट हुए। पञ्च-पाण्डवों में से महा-बली भीमसेन भी पितृ-ऋण से उद्धार पाने के लिए 'गया' आए थे और शास्त्रानुसार पिण्ड-दान किए थे। भीमसेन जब घुटने के बल पिण्ड-दान कर रहे थे, तब पृथ्वी नीचे की ओर धसक गई थी। वह स्थान आज भी 'मङ्गला-गौरी' के निकट ही दर्शनीय है।

'गया' में 'सर्व-मङ्गला' के अतिरिक्त अन्य भी शक्ति-स्थल हैं, जिनमें वागेश्वरी, बगला, सङ्कटा आदि प्रसिद्ध हैं। गया की उत्तर दिशा में वागेश्वरी और दक्षिण दिशा में 'सर्व - मङ्गला' विराजमान हैं। यही कारण है कि 'गया' को, तन्त्र के अनुसार, भैरवी - चक्र पर अवस्थिता नगरी माना गया है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 'पालन-पोषण' की शक्ति देनेवाले उक्त 'सर्व-मङ्गला-पीठ' के प्रति जैसा ध्यान देना चाहिए, वैसा ध्यान देना दूर रहा—भारतीय लोग 'गया' को केवल 'श्राद्ध' के लिए ही स्मरण करते हैं और इस श्रेष्ठ 'शक्ति-पीठ' को प्रायः भुला ही बैठे हैं! इसी का दुष्परिणाम है कि 'बिहार' और भारतीय जनता घोर 'दरिद्रता' से पीड़ित रहे हैं। शासन और आस्तिक जनता को शीघ्र ही 'मङ्गला-गौरी-पीठ' को उसके अनुरूप प्रतिष्ठा दिलाने हेतु प्रयास करना चाहिए। इसी में उनका हित है।

(२) आदि शक्ति-पीठ—रज-रप्पा

दूसरा प्रधान पीठ है—'रज-रप्पा'। यह पीठ हजारीबाग जिले के गोला नामक स्थान से १४ कि. मी. और रामगढ़ से ३१ कि. मी. की दूरी पर अवस्थित है। 'रज - रप्पा' में छिन्न - मस्ता की प्रतिमा है। दस महा-विद्याओं में छिन्न - मस्ता और बगला-मुखी विशेष उग्र और शीघ्र फल देने-वाली प्रख्यात हैं। भगवती बगला अपने शत्रु की जिह्वा और छिन्न - मस्ता अपना कटा सिर अपने हाथ में पकड़े हैं। सिर-विहीन गले से रक्त की तीन धाराएँ निकली हैं, एक धार स्वयं छिन्न-मस्ता के कटे सिर के मुख में और दो धाराएँ बगल में खड़ी दो योगिनियों के मुख में गिर रही हैं। प्रश्न उठता है कि रक्त की तीन धाराएँ क्यों निकलीं ? इस प्रश्न का उत्तर निम्न कथाओं के माध्यम से समझा जा सकता है—

दक्ष प्रजापति ने यज्ञ किया। उस यज्ञ में सभी देवताओं को सादर आमन्त्रित किया गया, लेकिन देवाधि-देव महा-देव को नहीं बुलाया गया। शङ्कर की बात को टालकर सती पिता के यज्ञ में जाने को उद्यत हुईं और उनसे बोलीं कि "आप केवल संहार करनेवाले हैं, किन्तु मैं सृष्टि, स्थिति और संहार—तीनों की नियामिका हूँ।" यह कहकर उन्होंने अपना सिर काटकर छिन्न-मस्ता-स्वरूप प्रकट किया। रक्त की जो तीन धाराएँ निकलीं, वे वास्तव में सृष्टि, स्थिति और प्रलय की द्योतक हैं।

'नारद-पाञ्च-रात्र' के अनुसार पार्वती अपनी दो सखियों—डाकिनी और वर्णिनी—के साथ मन्दाकिनी में स्नान करने गईं। स्नान के बाद क्षुधा-तुर हो सखियों ने पार्वती से भोजन की याचना की। आक्रोश में देवी पार्वती ने कहा—"हमें खा लो !" सखियों ने कहा—"तुम जगत् की जननी हो। शिशु जननी से ही याचना करता है। इसीलिए हे करुणा-मयि ! आपसे हमने याचना की।" माँ ने कृपा की और अपना सिर काट कर रक्त की धाराएँ प्रवाहित कर दीं। दोनों सखियाँ तृप्त हो गईं। सिर कटने से पार्वती 'छिन्न-मस्ता' नाम से प्रसिद्ध हुईं।

'रज-रप्पा' की छिन्न-मस्ता की प्रतिमा १५" लम्बी और ७" चौड़ी है। चार भुजाएँ हैं। बाँईं भुजा में कटा हुआ सिर, दूसरी भुजा में प्याला। दाहिनी भुजा में गोलाकार वस्तु और दूसरे में तलवार है। देवी के दोनों

ओर एक-एक नारी-मूर्ति है। इन दोनों के दाहिने हाथ में तलवार और बाँएँ हाथ में प्याला है। इन्हें 'डाकिनी' और 'वर्णिनी' कहते हैं।

रज-रप्पा की छिन्न-मस्ता हिन्दुओं, सन्थालों और आदि - वासियों के द्वारा समान रूप से सम्पूजिता हैं। आदि-वासी इस पवित्र स्थान को अपना पुण्य-धाम समझते हैं और गया की तरह यहीं पर अपने पितरों को पिण्ड-दान करते हैं।

(३) प्रसिद्ध शक्ति-पीठ—अम्बिका

तीसरा प्रसिद्ध शक्ति-पीठ है—'अम्बिका'। सप्तशती के "कृत्वा मूर्तिं मही-मयीम्" पाठ के अनुसार राजा सुरथ और समाधि वैश्य—दोनों ने भगवती की मिट्टी की प्रतिमा बनाई और इसी स्थल पर उपासना की। उपासना-क्रम में पहले उन्होंने आहार कम किया और तत्पश्चात् निराहार रहकर तन-मन से साधना की। वे दोनों अपनी प्रिय - से - प्रिय वस्तु भी माँ के चरणों में अर्पित करने के लिए प्रस्तुत थे। यहाँ तक कि अपने शरीर से रक्त भी उन्होंने अर्पित किया। उनके अपूर्व त्याग से प्रसन्न होकर जगदम्बा ने उन्हें अभीष्ट वर प्रदान किए— राजा सुरथ को राज्य की और वैश्य समाधि को ज्ञान और मोक्ष की प्राप्ति हुई।

'अम्बिका'-पीठ के सम्बन्ध में लोगों का यह भी कहना है कि यहीं पर दक्ष प्रजापति ने यज्ञ किया था और उसी यज्ञ-स्थल में वर्तमान प्रतिमा प्रतिष्ठित है। प्रतिमा के बगल में 'सिद्ध - कामना छिद्र' है, जिसके सम्बन्ध में भक्तों का कहना है कि अपने मन में किसी प्रकार की कामना रखकर छिद्र में हाथ डालने से अक्षत, बिल्व - पत्र आदि कोई वस्तु मिले, तो समझना चाहिए कि मनोरथ सिद्ध होगा और यदि कोई वस्तु न मिले, तो सिद्धि में सन्देह रहता है।

माँ की प्रतिमा आज भी मिट्टी की ही है, जिस पर हजारों श्रद्धालु भक्त नित्य जल अर्पण करते हैं, लेकिन प्रतिमा पर इस जल का तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ता। ऐसी अद्भुत महिमा - मयी माँ हैं, जहाँ नित्य हजारों दुःखी-जन अपनी आर्त्त-वाणी में माँ से प्रार्थना करते हैं और उनका अभीष्ट पूर्ण होता है।

प्रयाग-राज

—सम्पादक

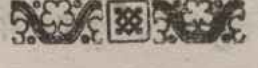

(१)

पटना नगर की अधिष्ठात्री

श्री पटन देवी

हिन्दू-धर्मावलम्बियों के अनुसार **'पटन देवी'** पटना नगर की अधिष्ठात्री देवी एवं परि-रक्षिका शक्ति हैं। **'पटन देवी'** भारतवर्ष के ५१ शक्ति-पीठों की अधिष्ठात्री देवियों में से एक हैं। पुराणों और आगमों के अनुसार दक्ष-पुत्री सती के अङ्ग जिन ५१ स्थानों में गिरे, वे 'शक्ति-पीठ' कहलाए।

पटना-क्षेत्र में सती का 'पट' गिरा, था, जिसके कारण 'पटना-शक्ति-पीठ' की अधिष्ठात्री देवी का नाम **'पटन देवी'** पड़ा।

अन्य मत के अनुसार इस नगर का पुराना नाम पाटलिपुत्र-पत्तन था। अतः नगर की देवी होने के कारण इन्हें पत्तन देवी के रूप में अभिहित किया गया।

पटना नगर तथा आस-पास के निवासी हर हिन्दू-परिवार के लिए जन्म से विवाह तक, हर माङ्गलिक अवसर पर **'पटन देवी'** की पूजा-अर्चना अनिवार्य-सी है। वैसे तो प्रति-दिन यहाँ दर्शनार्थियों की भीड़ लगी रहती है, परन्तु नवरात्रि के अवसर पर यहाँ नर-नारियों की भीड़ उमड़ पड़ती है।

यहाँ **'पटन देवी'** की दो प्रतिष्ठाएँ हैं—एक बड़ी और दूसरी छोटी। 'बड़ी पटन देवी' गुलजार-बाग में राजकीय मुद्रणालय के दक्षिण महाराज-गंज में, अशोक राज-पथ तथा शेरशाह पथ के बीच, स्थित हैं। 'छोटी पटन देवी' हाजीगंज और हरि-मन्दिर गली के बीच में विराजमान हैं। दोनों ही मन्दिरों के पुजारी अपने-अपने मन्दिर को एक-दूसरे से अधिक प्राचीन बताते हैं।

भवन की बनावट तथा पुरातत्त्व की दृष्टि से 'छोटी पटन देवी' अधिक प्राचीन मालूम पड़ती हैं। कहते हैं कि शिव जी जब सती के शव को अपने कन्धे पर टाँगे हुए आकाश में विचरण कर रहे थे, उस समय सती के

प्रत्येक अङ्ग कटकर देश के विभिन्न भागों में गिरे। पटने में जहाँ उनका 'पट' गिरा, वहीं छोटी पटन देवी स्थापित हैं। यहाँ एक कुएँ में उक्त 'पट' (वस्त्र) गिरा था। वह कुआँ मन्दिर के प्राङ्गण में अभी तक सुरक्षित है।

एक कथा यह भी है कि पटन देवी को वर्तमान रूप में पाटलिपुत्र के राजा सुदर्शन की पुत्री पाटलि ने प्रतिष्ठित किया, जो इस प्राचीन नगर को, जो अब पटना के नाम से विख्यात है, पुत्र-वत् मानती थीं। इसी कारण इसका नाम 'पाटलिपुत्र' पड़ा। फ्रांसिस बकनन (बाद में हेमिण्टन) सन् १८११-१२ में पटन आए थे। उन्होंने अपने सर्वेक्षण में पटन देवी की चर्चा विस्तार से की है। उन्होंने लिखा है कि छोटी पटन देवी को वर्तमान स्वरूप अकबर के प्रसिद्ध सेनापति राजा मानसिंह ने प्रदान किया। इसके भवन के सम्बन्ध में कोई उल्लेखनीय बात नहीं है, परन्तु 'बड़ी पटन देवी' की तुलना में यहाँ आनेवाले दर्शनार्थियों की संख्या अधिक है। कनौजिया (कान्यकुब्ज) ब्राह्मण इस 'पीठ' के पुजारी हैं।

'पटना कारपोरेशन शताब्दी-स्मृति-ग्रन्थ' में डाक्टर श्रीकृष्ण उपाध्याय ने लिखा है—"प्राचीन काल में पाटलिपुत्र की पट्ट-महिषी पटलावती को स्वप्न हुआ। स्वप्न के अनुसार उन्होंने खुदाई कराई, जिससे तीन मूर्तियाँ निकलीं, जो बड़ी पटन देवी में सिंहासनस्था हैं। मन्दिर के पीछे 'बड़ी पटन देवी खन्धा' के नाम से विख्यात गड्ढा वही स्थान है, जहाँ से खोदकर ये मूर्तियाँ निकाली गई थीं।"

फ्रांसिस बकनन ने लिखा है '...मन्दिर के पुजारी का कहना है कि यह मन्दिर सृष्टि के आरम्भ से है। मन्दिर बहुत छोटा और साधारण ढंग से बना हुआ है। पुजारियों ने अपने धन से इसे बनवाया है। इस मन्दिर के पुजारी कनौजिया ब्राह्मण हैं। यहाँ प्रति शनिवार तथा मङ्गलवार को बड़ी संख्या में बकरों की बलि चढ़ाई जाती है...।' 'बड़ी पटन देवी' के पुजारी इन दिनों मैथिल ब्राह्मण हैं। बलि चढ़ाने की प्रथा यहाँ निरन्तर प्रचलित है।

डाक्टर डी० आर० पाटिल ने भी अपनी पुस्तक 'एण्टिक्वेरियन रिमेन्स इन बिहार' में इन दोनों पटन देवियों की चर्चा करते हुए फ्रांसिस बकनन तथा श्री मनोरंजन घोष के विवरणों का संक्षिप्त उल्लेख करते हुए लिखा है कि दोनों पटन देवियों के इतिहास या पुरा-तत्त्व के सम्बन्ध में कोई

लिखित सामग्री नहीं मिलती। यहाँ दुर्गा, लक्ष्मी एवं सरस्वती की तीन छोटी प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित हैं।

छोटी पटन देवी में अब बलि नहीं चढ़ाई जाती। इस स्थान में भगवान् सूर्य तथा विष्णु की प्रतिमाएँ भी हैं। भगवान् सूर्य की एक अति-सुन्दर मानवाकार प्रतिमा मन्दिर के प्राङ्गण में ही खुदाई करने के समय निकली थी जो मन्दिर के पिछवाड़े उपेक्षित दशा में पड़ी है। बहुत दिनों तक इस प्रतिमा में गाय-भैंस बाँधने का काम लिया गया, जिसके फल-स्वरूप इसके दो टुकड़े हो गए और आज भी वह मैदान में पूर्व-वत् उपेक्षित पड़ी है।

'पटन देवी' को ५१ शक्ति-पीठों में एक पीठ होना ही चाहिए, क्योंकि 'तन्त्र-चूड़ामणि' के अनुसार सती की दक्षिण जंघा मगध में गिरी थी। वहाँ इस पीठ की अधिष्ठात्री देवी का नाम **'सर्वानन्द-करी'** बताया है और उनके शिव **'व्योमकेश'** कहे गए हैं।

कुछ लोगों का मत है कि सती का पट जिस स्थान पर गिरा, वहाँ पर जो मन्दिर बना, वह पटन देवी कहलाया। कुछ लोगों का विचार है कि जिस स्थान पर उनकी दक्षिण जंघा गिरी, वहीं पटन देवी विराजमान हैं। जो भी हो, इसमें संदेह नहीं कि प्रयाग, वाराणसी, कामाख्या आदि शक्ति-पीठों के समान पटना भी एक प्राचीन शक्ति-पीठ है।

—श्री रामजी मिश्र 'मनोहर'

(२)

भगवती पट्टनेश्वरी

इतिहास के पृष्ठों में 'पाटलिपुत्र' जैन एवं बौद्ध धर्मों के सन्दर्भ में अतिशय चर्चित है, परन्तु अनादि-काल से शक्ति की लोक-साधना का जो शाश्वत अन्तर्प्रवाह पाटलिपुत्र-वासियों को अनुप्राणित करता रहा है वह आज भी प्रच्छन्न अनुभूत है। 'पटना सिटी' के नाम से आजकल प्रसिद्ध प्राचीन 'पाटलिपुत्र' के अंक में अनेक शक्ति-मन्दिर दृष्टि-गोचर होते हैं, यथा छोटी पटन देवी एवं बड़ी पटन देवी मन्दिर, गांधी-सरोवर स्थित

काली-मन्दिर, अगम कुआँ का शीतला मन्दिर, चौहट्टा-स्थित महा-सरस्वती मन्दिर, खाजेकलां का काली-मन्दिर, गुलजारबाग का सर्व-मङ्गला-मन्दिर, गुड़ की मण्डी का पीताम्बरा-मन्दिर, बक्सी मुहल्ले का सीता-मन्दिर आदि।

'पाटलिपुत्र' का पटना'—नाम निश्चित रूप से संस्कृत-शब्द पट्टनम्' का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ जल-परिवहन से सम्बद्ध व्यापारिक नगर होता है। गङ्गा-तट पर अवस्थित होने के कारण प्राचीन काल में पाटलिपुत्र नगर का विकास एक ऐसे ही केन्द्र के रूप में हुआ है। अस्तु, पाटलिपुत्र की पीठासीन देवी का नाम 'पटन देवी' या पट्टनेश्वरी' प्रसिद्ध हुआ। पटन देवी के नाम से यहाँ दो मन्दिर हैं—'दयारा' क्षेत्र में तख्त श्री हरि-मन्दिर गुरु-द्वारा के समीप 'छोटी पटन देवी का मन्दिर' और गुलजार बाग स्थित बड़ी पटन देवी का मन्दिर'।

इस मन्दिर के निर्माण की कथा अत्यन्त रोमाञ्चक है। कहते हैं, किसी रात्रि को पाटलिपुत्र की पट्ट-महिषी पाटलावती को स्वप्न हुआ। स्वप्नानुसार मन्दिर के समीपस्थ एक स्थान की खुदाई करवाने पर भगवती महा-काली, महा-लक्ष्मी एवं महा-सरस्वती की तीन मूर्तियाँ निकलीं, जिन्हें विधि-वत् स्थापित कर मन्दिर निर्माण करवाया गया। आज भी यह स्थान 'पटन देवी' का 'गड्ढा' के नाम से प्रसिद्ध है। मन्दिर के प्राङ्गण में किसी ऐतिहा-सिक सूचना का कोई स्रोत नहीं है, परन्तु वहाँ लगे सूचना-पट्ट के अनुसार इसी स्थान पर भगवती सती की दक्ष-जंघा का पतन हुआ था। मन्दिर अपेक्षाकृत भव्य और आधुनिक स्वरूप-प्रदत्त है। मन्दिर क विस्तृत क्षेत्र में कर्म-काण्डीय गतिविधियों की चहल-पहल सदैव बनी रहती है।

पुरातत्त्व-विभाग के सूचना-पट्ट से यह स्पष्ट है कि इस मन्दिर का निर्माण १६ वीं शताब्दी में अकबर के प्रसिद्ध सेनापति राजा मानसिंह द्वारा करवाया गया था। अब यह मन्दिर पुरातत्त्व-विभाग के नियन्त्रणाधीन है, परन्तु खेद की बात है कि मन्दिर की अवस्था दिनानुदिन जीर्ण-शीर्ण होती जा रही है। इस मन्दिर में भी त्रिगुणात्मिका भगवती आद्या महा-लक्ष्मी की विग्रह-त्रयी—महा-काली, महा-लक्ष्मी एवं महा-सरस्वती के रूप में 'भगवती पट्टनेश्वरी' प्रतिष्ठित हैं। किंवदन्ती है कि एक प्रसिद्ध बंगाली तान्त्रिक ने अपनी कुमारी कन्या के द्वारा, इनकी स्थापना करवाई थी। मूर्ति के समक्ष एक प्रस्तर-खण्ड पर कमल-दल-रूप मेरु बना है।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि यहाँ भगवती सती का 'पट्टाम्बर' गिरा था। कुछ अति-विश्वासी भक्तों की यह धारणा है कि यहाँ भगवती का 'पृष्ठ-भाग' गिरा था। लोक-भाषा में यह भाग 'पट' (उल्टा) कहा जाता है। अतः देवी का नाम 'पटन देवी' पड़ा, परन्तु यह विश्वास प्रामाणिकता के कितने समीप है, कुछ कहा नहीं जा सकता।

ज्ञातव्य है कि तीन वर्ष पूर्व मन्दिर की छत गिर जाने पर भगवती का पीठ-स्थल, जो मिट्टी का बना है, अनवरत धूप, वर्षा और शीत झेलते हुए भी तज्जन्य सम्भावित क्षरण से सर्वथा मुक्त रहा है और पीठ पूर्णतः यथा-वत् है। इसी पीठ के बाँई ओर पीठ-भैरव के प्रतीक-स्वरूप ताम्र-मण्डित विशाल शिव-लिङ्ग स्थापित है।

प्रख्यात पौराणिक आख्यान के अनुसार दक्ष-यज्ञ में दग्ध भगवती सती का मृत शरीर लेकर भगवान् शिव अत्यन्त क्रुद्ध होकर विक्षिप्त-वत् त्रैलोक्य में विचरण करने लगे। सम्पूर्ण सृष्टि भयाकुल हो उठी, पृथ्वी पाताल में धँसने लगी। परम चिन्तित देव-गण भगवान् विष्णु ने सती के शरीर को अपने सुदर्शन-चक्र से खण्डित करना प्रारम्भ कर दिया। सती के चक्रावछिन्न अङ्ग-प्रत्यङ्ग और आभरण जिन स्थानों पर गिरे, उनमें ५१ स्थान सिद्ध-पीठ और देवी-भागवतानुसार कुल १०८ स्थान शक्ति-पीठों के रूप में विख्यात हुए। पाटलिपुत्र इन्हीं १०८ शक्ति-पीठों में से एक है।

शक्ति-पीठों की अवस्थिति को लेकर विद्वानों में तीव्र मतभेद हैं। इसी प्रकार पाटलिपुत्र में दो पटनदेवी मन्दिर का होना थोड़ा संशय में डाल देता है। दिव्य-गण तो विश्व-रूपा का विश्व के कण-कण में दर्शन करते हैं, परन्तु जहाँ तक पौराणिकता का प्रश्न है, उक्त संशय स्वाभाविक भी है। कुछ विद्वान् 'तन्त्र-चूड़ामणि' की निम्नलिखित उक्ति के आधार पर बड़ी पटन देवी स्थान को ही शक्ति-पीठ मानते हैं—

"मगधे दक्ष-जंघा मे, व्योमकेशस्तु भैरवः।
सर्वानन्द-करी देवी, सर्वानन्द-फल-प्रदा॥"

परन्तु उल्लेखनीय है कि मगध का क्षेत्र पाटलिपुत्र तक ही सीमित नहीं था। यह राजगृह और गया से भी आगे तक विस्तृत था। पूरे मगध-क्षेत्र में इस समय चार स्थान शक्ति-पीठ माने जाते हैं—छोटी पटन देवी, बड़ी पटन देवी, राजगृह का महा-काली मन्दिर एवं गया का मंगला-गौरी

निकट ही मार्कण्डेय शिव का स्थान है, जिससे 'सर्व - मङ्गला' की महिमा द्विगुणित हो जाती है। सन्निकट ही चतुर्भुजी काली और छिन्न - मस्ता की प्रतिमाएँ भी हैं। प्रवेश-द्वार पूर्व दिशा की ओर है और प्रवेश - द्वार से सटे सिद्धि-दाता गणेश हाथ में मोदक लिए विराजमान हैं। मन्दिर के ऊपर श्री गजाधर भगवान् की विशाल प्रतिमा है।

सर्व-मङ्गला-पीठ की विशेषताएँ

आश्चर्य-जनक विशेषता इस 'पीठ' की यह है कि मनुष्य अपने जीवन-काल में ही अपना श्राद्ध-कर्म यहाँ सम्पादित कर सकता है। जीवित दशा में अपने श्राद्ध-कर्म का विधान और कहीं नहीं मिलता। इस सम्बन्ध में एक घटना का वर्णन करना यहाँ प्रासङ्गिक ही होगा। हमारे एक मित्र थे बड़े सज्जन और सच्चरित्र। प्रबुद्ध विद्वानों से इस स्थान की महिमा सुनकर उन्होंने अपने जीवन-काल में ही मृत्यु-पश्चात् होनेवाले वैदिक कर्म-काण्ड को यहाँ विद्वानों द्वारा सम्पन्न करवाया और परम सन्तुष्ट हुए। पञ्च-पाण्डवों में से महा-बली भीमसेन भी पितृ-ऋण से उद्धार पाने के लिए 'गया' आए थे और शास्त्रानुसार पिण्ड-दान किए थे। भीमसेन जब घुटने के बल पिण्ड-दान कर रहे थे, तब पृथ्वी नीचे की ओर धसक गई थी। वह स्थान आज भी 'मङ्गला-गौरी' के निकट ही दर्शनीय है।

'गया' में 'सर्व-मङ्गला' के अतिरिक्त अन्य भी शक्ति-स्थल हैं, जिनमें वागेश्वरी, बगला, सङ्कटा आदि प्रसिद्ध हैं। गया की उत्तर दिशा में वागेश्वरी और दक्षिण दिशा में 'सर्व - मङ्गला' विराजमान हैं। यही कारण है कि 'गया' को, तन्त्र के अनुसार, भैरवी - चक्र पर अवस्थिता नगरी माना गया है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 'पालन-पोषण' की शक्ति देनेवाले उक्त 'सर्व-मङ्गला-पीठ' के प्रति जैसा ध्यान देना चाहिए, वैसा ध्यान देना दूर रहा—भारतीय लोग 'गया' को केवल 'श्राद्ध' के लिए ही स्मरण करते हैं और इस श्रेष्ठ 'शक्ति-पीठ' को प्रायः भुला ही बैठे हैं! इसी का दुष्परिणाम है कि 'बिहार' और भारतीय जनता घोर 'दरिद्रता' से पीड़ित रहे हैं। शासन और आस्तिक जनता को शीघ्र ही 'मङ्गला-गौरी-पीठ' को उसके अनुरूप प्रतिष्ठा दिलाने हेतु प्रयास करना चाहिए। इसी में उनका हित है।

से उनके बाल-मन में भक्ति के अंकुर फूटे हों, तो क्या आश्चर्य ! तभी तो भक्ति-भावापन्न होकर वे भवानी से यह कहते हुए पाए जाते हैं—

"देहि शिवा वर मोहि इहै, शुभ कर मन से कबहूँ न टरौं"

—'कुल-वाणी-रत्न' श्री विजय वत्स

(३)

पटना, भिखना पहाड़ी पर अवस्थित—

श्री मंगला गौरी

पटना के चार ऐतिहासिक कुएँ प्रख्यात हैं १. अगम कुआँ २. कदम कुआँ, ३. पखनिया कुआँ और ४. मङ्गला गौरी कुआँ। ये चारों कुएँ महान् अशोक के समय से प्रसिद्ध हैं। भिखना पहाड़ी उन दिनों बौद्ध भिक्षुओं का केन्द्र थी। यह आश्चर्य की ही बात है कि जब बिहार में बौद्ध धर्म अपने उच्च-तम उत्कर्ष पर था, उस समय प्राचीन पाटलिपुत्र के मध्य स्थल में भगवती दुर्गा की पूजा कैसे होती रही ! भिखना पहाड़ी पर अवस्थित **'मङ्गला गौरी कुआँ'** आज भी इस ऐतिहासिक विलक्षणता का निदर्शक है। अपार गहरे कुएँ की छोटी-छोटी पुरानी ईंटें अतीत की कितनी ही रहस्य-मरी कथाओं से भक्तों और दर्शकों को रोमाञ्चित कर देती हैं।

कालान्तर में भारत से बौद्ध-धर्म का प्रभाव समाप्त हुआ, साथ ही पाटलिपुत्र भी महिमा-रहित हो गया। उनके साथ ही मंगला गौरी कुआँ भी विस्मृति के पर्दे में छिप-सा गया। यहाँ तक कि पटना के इस क्षेत्र में एक शती पूर्व जङ्गल-ही-जङ्गल दिखाई देने लगा था, सर्प फुफकारा करते थे और डाकुओं ने अपने अड्डे बना लिए थे ! दिन में भी कोई उधर जाने का साहस नहीं कर पाता था, किन्तु प्रतापी मनुष्य वहाँ भी पहुँच कर मानते हैं, जहाँ देवता पार नहीं पाते।

लगभग ९० वर्ष पूर्व श्री जगदम्बा के एक श्रेष्ठ उपासक पण्डित जयगोविन्द झा का ध्यान उक्त पवित्र स्थान के प्रति आकृष्ट हुआ और वे उस बीहड़ स्थान के 'मङ्गला गौरी कुआँ' पर माँ दुर्गा की साधना में तत्पर

हो गए। उस समय वह स्थान टूटी ईंटों के एक खण्डहर के रूप में था, मन्दिर सर्वथा ध्वस्त हो चुका था। श्री झा जी के सुपुत्र ज्योतिषाचार्य पण्डित चक्रधर झा का जन्म १ अप्रैल, १९३० को हुआ और जब वे मात्र ११ वर्ष के किशोर थे, उन्होंने स्वप्न में देखा कि एक तेजोमयी स्त्री उस भग्न मन्दिर में प्रवेश कर रही है। यह स्वप्न जब उन्होंने अपने पूज्य पिताश्री को बताया, तो पण्डित जयगोविन्द झा तुरन्त समझ गए कि भगवती मङ्गला गौरी ने ही उनके पुत्र को दर्शन दिए हैं।

स्वप्न-दर्शन के बाद से ही पं० चक्रधर झा के मन में उक्त मन्दिर को बनवाने और उसमें माँ की एक प्रतिमा प्रतिष्ठित करने का सङ्कल्प अंकुरित हो उठा, किन्तु ४९ वर्षों तक उस दिशा में वे कुछ कर नहीं पाए। समय बीतने के साथ वे ज्योतिषाचार्य और हस्त-रेखा-विशेषज्ञ के रूप में ख्याति अर्जित करते गए। साथ ही अपने सङ्कल्प की पूर्ति के उद्योग में भी लगे रहे।

१८ वर्ष की आयु से ही अपने पूज्य पिताश्री के निर्देशानुसार आप माँ की पूजा तो करते ही रहे, संस्कृत के विद्वान् हो जाने पर आपकी वह पूजा विधिवत् साधना के रूप में परिणत हो गई। सन् १९७५ में इसी साधना के क्रम में आप चौथी बार कामाख्या-धाम पहुँचे। वहाँ आषाढ़ के नवरात्र में भगवती दुर्गा की उपासना फलाहार करते हुए आपने की। कुमारी-पूजा के अन्तर्गत सात वर्ष की कन्या ने आपके मस्तक पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया कि 'पटना में जिस भगवती-स्थान पर तुम रहते हो, उस स्थान का तुम जीर्णोद्धार करोगे। सभी विघ्न-बाधाएँ दूर होंगी और तुम्हारे हाथ से मन्दिर बनेगा, जिसमें तुम सिंह-वाहिनी चतुर्भुजा दुर्गा की प्रतिष्ठा करोगे।'

उक्त विलक्षण आशीर्वाद पाकर झा जी चकित हो गए। आपकी मनोकामना भी चिर काल से यही थी। पुलकित होकर आपने कहा कि 'आपकी वाणी के अनुसार कार्य सम्पन्न हो जाने पर मैं पुन यहाँ आकर विधि-विधान-पूर्वक कुमारी-पूजन करूँगा।'

पटना वापस आने पर आपके अनुष्ठानों के फल-स्वरूप एक आय-कर अधिकारी श्री रजनीकान्त जी एवं उनके दो अन्य साथियों को सन्तान-लाभ हुआ। फलतः उनके सहयोग से अशोक-कालीन उक्त मन्दिर का जीर्णोद्धार-कार्य सहज ही हो गया। जीर्णोद्धार के उपलक्ष्य में जो पूजनादि-समारोह

हुए, उनमें भक्त जनता के सहयोग से लगभग तीन हजार रुपए भी एकत्र हो गए। तत्काल ही झा जी का ध्यान श्री मङ्गला-गौरी के पूजा-पीठ पर गया और आपके मन में यह विचार आया कि यहाँ १/२ फीट चौड़ी तथा ४½ फीट लम्बी प्रतिमा स्थापित हो, तो अभीष्ट शोभा मन्दिर की होगी।

भगवती की प्रतिमा हेतु अपनी पत्नी श्रीमती सत्यवती देवी और उनके भाई सपत्नीक पं० कालीचरण मिश्र के साथ जनवरी, १९७७ में आप जयपुर जा पहुँचे। वहाँ के मूर्ति-बाजार में घूमते-घूमते ये लोग प्रायः निराश हो चुके थे। एक दिन जब ये लोग 'भिण्डो का रास्ता' नामक गली छोड़कर आगे बढ़ने ही वाले थे कि आपकी पत्नी ने आपको टोंका और कहा कि 'क्यों नहीं इस गली में भी देख लेते?' बिना मन ही उन लोगों ने उस छोटी-सी गली में प्रवेश किया और आश्चर्य से वे सभी अवाक् होकर दूसरी ही दूकान के सामने ठिठक कर खड़े हो गए। उस दूकान में सङ्गमरमर की चतुर्भुजी सिंह-वाहिनी भव्य प्रतिमा विराजमान थी, जिसकी खोज में वे इतनी दूर से आए थे।

उक्त दूकान के शिल्पी पं० रामरक्षपाल शर्मा ने बताया कि दो महीने पूर्व उन्हें स्वप्न हुआ कि 'एक चतुर्भुजी, सिंह-वाहिनी दुर्गा की प्रतिमा बनाओ। उसे लेने के लिए शीघ्र ही कोई आएगा।' स्वप्न के अनुसार मूर्ति तो तैयार हो गई, किन्तु चतुर्भुजी मूर्ति लेनेवाले कम ही लोग होते हैं। फिर स्वप्न में जैसा निर्देश किया गया था, यह मूर्ति ४½ फीट लम्बी बनाई गई थी। फलतः बिना बिकी अब तक रखी थी।

बिना किसी विशेष तर्क-वितर्क के ३५०० रुपए में प्रतिमा को प्राप्त कर सहर्ष ये लोग पटना वापस आए। रेल द्वारा सङ्गमर्मर की वह प्रतिमा ७ फरवरी, १९७७ को पटना पहुँच गई और उसी दिन उसे श्री मङ्गला गौरी के पूजा-पीठ पर विराजमान कर दिया गया। लोग यह देखकर चकित रह गए कि यद्यपि कोई नाप-जोख नहीं ली गई थी किन्तु प्रतिमा स्थान के सर्वथा अनुरूप ही निकली। बिना किसी कठिनाई के प्रतिमा पूजा-पीठ पर आरूढ़ हो गई। २१ फरवरी से शतचण्डी महा-यज्ञ प्रारम्भ हुआ और २ मार्च, १९७७ को विधिवत् 'श्रीमङ्गला गौरी मन्दिर' में वह प्रतिष्ठित हो गई। उसी दिन से प्राचीन 'मङ्गला गौरी कुआँ' भी पुन अपने ऐतिहासिक गौरव से युक्त हो चुका है और हजारों भक्त वहाँ पहुँचकर अपने को सब प्रकार से कृतार्थ अनुभव करने लगे हैं।

'श्रीमङ्गला गौरी मन्दिर' तक पहुँचने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती। पटना की वासन्तिक दुर्गा-पूजा 'पक्का बारी' स्थान पर होती है। उस स्थान के कुछ ही आगे लोअर मार्ग है, वहाँ से भिखना पहाड़ी को बाँई ओर मुड़ना होता है। एक फर्लांङ्ग बाद ही दाहनी ओर एक पुराना मकान है, जिसमें लोहे का नया द्वार लगा है। बस, वही आपका अभीष्ट 'श्री मङ्गला गौरी मन्दिर' है।

(४)

माँ काली का दर्शनीय मन्दिर

पटना के गोलघर चौराहे से लगभग ३०० गज पश्चिम की ओर गङ्गा के किनारे बाँसघाट श्मशान के निकट माँ काली का एक दर्शनीय मन्दिर है। इस मन्दिर की स्थापना सन् १९६४ के आस-पास की गई। मन्दिर के पास ही ब्रह्मनाथ औघड़ की समाधि है। प्राचीन समय से यह 'सती-चौरा' के नाम से भी प्रख्यात है। मन्दिर का अधिकांश कुछ वर्ष खपरैल-युक्त था। सन् १९७८-७९ में श्मशान की अग्नि उड़कर अचानक मन्दिर के खपरैल में लग जाने से जल गई, परन्तु यह स्थान का प्रताप ही है कि इधर कुछ वर्षों में मन्दिर का आशातीत विकास हुआ है और विकास का यह क्रम निरन्तर चल रहा है।

प्रति मङ्गल और शनिवार को यहाँ भगवती के भक्तों की अच्छी भीड़ लगती है, जो मन्दिर से सम्बन्धित आयोजनों में बड़े उत्साह से भाग लेती है। विशेष कर यहाँ होनेवाली नवरात्र-पूजा, काली-पूजा आदि देखने योग्य होती हैं। भगवती श्मशान-काली के अतिरिक्त श्री जगदम्बा के अन्य विग्रहों —श्री त्रिपुर-सुन्दरी, षोडशी आदि के भी विग्रह यहाँ प्रतिष्ठित हैं।

(५)

बिहीयाँ (भोजपुर) की

'महथिन देवी'

बिहार के भोजपुर जिले में बिहीयाँ नामक एक कस्बा है। पूर्व-रेलवे का यह एक छोटा-सा स्टेशन है। यह आरा से १६-१७ कि० मी० पश्चिम और बक्सर से ३५-४० कि० मी० पूर्व में है। स्टेशन से एक कि० मी० दूरी पर पूर्व में 'महथिन देवी' का रमणीक मन्दिर एकान्त वातावरण में स्थित है। बिहार के प्रसिद्ध देवी-स्थानों में इसका अपना विशिष्ट स्थान है।

यद्यपि मन्दिर प्राचीन और ऐतिहासिक है, तथापि इसका इतिहास अस्पष्ट ही है। परम्परागत तथ्यों के द्वारा ही इसका कुछ अनुमान किया जा सकता है।

बिहीयाँ के अतीत-कालीन एक राजा रणपाल अत्यन्त दुराचारी, अत्याचारी एवं शोषक थे। उनके विरुद्ध एक ब्राह्मण कन्या ने विद्रोह किया और चित्तौड़ की महारानी पद्मिनी के समान दुर्दान्त साहस का परिचय देकर अपने को स्वाहा कर जन-मानस में चेतना का संचार कर दिया। उसी की स्मृति में लोगों ने एक मन्दिर बना दिया, जिससे भविष्य में लोग यहाँ से शिक्षा लेकर एवं उस अतीत का स्मरण कर उत्पीड़नों और अत्याचारों का उन्मूलन करने में सफल हो सकें। तब से पड़ोस के क्षेत्रों की सभी नव-विवाहिता स्त्रियाँ इस पवित्र स्थल पर अवश्य आती हैं और उस कन्या की देवी-रूप में पूजा करती हैं। आज भी वह 'सुहाग देवी' के रूप में प्रसिद्ध हैं। प्रत्येक विवाहिता कन्या अपने सुहाग की रक्षा के लिए साड़ी चढ़ाने आती है। वास्तव में यह मन्दिर एक जाज्वल्यमान मशाल के समान है—असीम साहस, शौर्य, बलिदान त्याग, समर्पण और उत्साह की।

मन्दिर का आज जो बाह्य स्वरूप है, वह लगभग १५० वर्ष पुराना है। जब रेलवे लाइन बिछ रही थी, तो इसी स्थल से होकर लाइन को लगाना था, किन्तु दिन में जब लाइन बिछा दी जाती, तो रात्रि में स्वतः उखड़ कर दूर हट जाती। जो अंग्रेज अधिकारी लाइन बिछवा रहा था, उसकी आँखें खराब होने तक की स्थिति आ गई। भारत की रहस्य-मयी देवियों एवं

'श्रीमङ्गला गौरी मन्दिर' तक पहुँचने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती। पटना की वासन्तिक दुर्गा-पूजा 'पक्का बारी' स्थान पर होती है। उस स्थान के कुछ ही आगे लोअर मार्ग है, वहाँ से भिखना पहाड़ी को बाँई ओर मुड़ना होता है। एक फर्लांङ्ग बाद ही दाहनी ओर एक पुराना मकान है, जिसमें लोहे का नया द्वार लगा है। बस, वही आपका अभीष्ट 'श्री मङ्गला गौरी मन्दिर' है।

(४)

माँ काली का दर्शनीय मन्दिर

पटना के गोलघर चौराहे से लगभग ३०० गज पश्चिम की ओर गङ्गा के किनारे बाँसघाट श्मशान के निकट माँ काली का एक दर्शनीय मन्दिर है। इस मन्दिर की स्थापना सन् १९६४ के आस-पास की गई। मन्दिर के पास ही ब्रह्मनाथ औघड़ की समाधि है। प्राचीन समय से यह 'सती-चौरा' के नाम से भी प्रख्यात है। मन्दिर का अधिकांश कुछ वर्ष खपरैल-युक्त था। सन् १९७८-७९ में श्मशान की अग्नि उड़कर अचानक मन्दिर के खपरैल में लग जाने से जल गई, परन्तु यह स्थान का प्रताप ही है कि इधर कुछ वर्षों में मन्दिर का आशातीत विकास हुआ है और विकास का यह क्रम निरन्तर चल रहा है।

प्रति मङ्गल और शनिवार को यहाँ भगवती के भक्तों की अच्छी भीड़ लगती है, जो मन्दिर से सम्बन्धित आयोजनों में बड़े उत्साह से भाग लेती है। विशेष कर यहाँ होनेवाली नवरात्र-पूजा, काली-पूजा आदि देखने योग्य होती हैं। भगवती श्मशान-काली के अतिरिक्त श्री जगदम्बा के अन्य विग्रहों —श्री त्रिपुर-सुन्दरी, षोडशी आदि के भी विग्रह यहाँ प्रतिष्ठित हैं।

(५)

बिहीयाँ (भोजपुर) की

'महथिन देवी'

बिहार के भोजपुर जिले में बिहीयाँ नामक एक कस्बा है। पूर्व-रेलवे का यह एक छोटा-सा स्टेशन है। यह आरा से १६-१७ कि० मी० पश्चिम और बक्सर से ३५-४० कि० मी० पूर्व में है। स्टेशन से एक कि० मी० दूरी पर पूर्व में 'महथिन देवी' का रमणीक मन्दिर एकान्त वातावरण में स्थित है। बिहार के प्रसिद्ध देवी-स्थानों में इसका अपना विशिष्ट स्थान है।

यद्यपि मन्दिर प्राचीन और ऐतिहासिक है, तथापि इसका इतिहास अस्पष्ट ही है। परम्परागत तथ्यों के द्वारा ही इसका कुछ अनुमान किया जा सकता है।

बिहीयाँ के अतीत-कालीन एक राजा रणपाल अत्यन्त दुराचारी, अत्याचारी एवं शोषक थे। उनके विरुद्ध एक ब्राह्मण कन्या ने विद्रोह किया और चित्तौड़ की महारानी पद्मिनी के समान दुर्दान्त साहस का परिचय देकर अपने को स्वाहा कर जन-मानस में चेतना का संचार कर दिया। उसी की स्मृति में लोगों ने एक मन्दिर बना दिया, जिससे भविष्य में लोग यहाँ से शिक्षा लेकर एवं उस अतीत का स्मरण कर उत्पीड़नों और अत्याचारों का उन्मूलन करने में सफल हो सकें। तब से पड़ोस के क्षेत्रों की सभी नव-विवाहिता स्त्रियाँ इस पवित्र स्थल पर अवश्य आती हैं और उस कन्या की देवी-रूप में पूजा करती हैं। आज भी वह 'सुहाग देवी' के रूप में प्रसिद्ध हैं। प्रत्येक विवाहिता कन्या अपने सुहाग की रक्षा के लिए साड़ी चढ़ाने आती है। वास्तव में यह मन्दिर एक जाज्वल्यमान मशाल के समान है—असीम साहस, शौर्य, बलिदान त्याग, समर्पण और उत्साह की।

मन्दिर का आज जो बाह्य स्वरूप है, वह लगभग १५० वर्ष पुराना है। जब रेलवे लाइन बिछ रही थी, तो इसी स्थल से होकर लाइन को लगाना था, किन्तु दिन में जब लाइन बिछा दी जाती, तो रात्रि में स्वतः उखड़ कर दूर हट जाती। जो अंग्रेज अधिकारी लाइन बिछवा रहा था, उसकी आँखें खराब होने तक की स्थिति आ गई। भारत की रहस्य-मयी देवियों एवं

घटनाओं का उसे स्मरण हो आया और उसने लाइन को वहाँ से हटाकर अलग बिछाने का आदेश दे दिया। यह मुड़ी हुई रेलवे लाइन आज भी देखी जा सकती है। उसी अंग्रेज ने चर्चिल और फॉक्स नामक दो अन्य अंग्रेज अधिकारियों के सहयोग से मन्दिर का निर्माण कराया।

मन्दिर के निरीक्षण से ज्ञात होता है कि पूजा-स्थल पर चार पूजा-केन्द्र बने हैं – दो मध्य में और दो अगल-बगल। किंवदन्ती है कि ब्राह्मण-कन्याएं दो थीं और दो उनकी सेविकाएँ थीं। अतः कन्याएँ मध्य में हैं एवं सेविकाएँ अगल-बगल में। मन्दिर का नाम भी दो प्रकार से लिया जाता है – १ महथिन माई, २ महथिन दाई। 'दाई'-शब्द उक्त किंवदन्ती की पुष्टि करता है। 'महतिन' का अपभ्रन्श होकर 'महथिन' शब्द बना है। 'महतिन' अर्थात् महतो (कुशवाहा) की लड़की। इस मत के अनुसार कन्या 'कोइरी' जाति की थी। कुछ लोग 'महथिन' को ही कन्या का मूल नाम मानते हैं। चाहे जो हो, 'महथिन माई' की महिमा का प्रभाव पड़ोस के क्षेत्रों में सर्व-मान्य रहा है, जो आज भी विद्यमान है।

❋❋❋

(६)

दीघवारा का सिद्ध

'श्री अम्बिका-पीठ'

बिहार के सारण (छपरा) जिलान्तर्गत उ० पू० रेलवे स्टेशन रामावतारनगर और दीघवारा के बीच में 'आर्मा नामक एक ग्राम है, जो गंगा-तट पर बसा हुआ है। इसी गाँव में गंगा के किनारे श्री अम्बिका-भवानी का भव्य मन्दिर है। मन्दिर पर्याप्त ऊँचाई पर निर्मित है और बहुत पुराना है। मन्दिर में कोई प्रतिमा नहीं है बल्कि मिट्टी का एक ऊंचा पीठ है, जिसमें नौ पिण्ड बने हैं, जो नव-दुर्गा के प्रतीक हैं। यह एक सिद्धि-दात्री शक्ति-पीठ है। इस मन्दिर में मन्त्र-यन्त्र की सिद्धि के इच्छुक भक्त साधक आते ही रहते हैं और मन्दिर में अपनी साधनार्चना कर अल्पावधि में ही अपना मनोरथ पूर्ण कर लेते हैं। इस मन्दिर में ब्रह्मीभूत करपात्री जी ने भी नवरात्र-पारायण किया था।

शारदीय और वासन्तीय नवरात्र धूमधाम से यहाँ होता है। इस अवसर पर अब यहाँ मेला लगने लगा है। उल्लेखनीय है कि यह मेला मात्र पूजा-पाठ का ही रहता है। बिना किसी खेल-तमाशे के, मात्र पूजा-पाठ और मनौती उतारनेवाले लोगों से ही परम सुहावना मेला जैसा दृश्य उपस्थित होता है, जो श्री भवानी की दयार्द्रता का जीता-जागता उदाहरण है। 'श्री चण्डी' (दुर्गा-सप्तशती) का पाठ तो बहुतेरे साधक निरन्तर करते रहते हैं और बहुत से भक्त आते-जाते रहते हैं। इस प्रकार नवरात्र में नौ दिनों तक दूर-दूर के लोग आकर पूजा-पाठ, कुमारी-भोजन, बटुक-भोजन इत्यादि करते हैं। माँ का दरबार सबके लिए समान-रूप से खुला रहता है। इसमें कोई भी भेद-भाव नहीं है। सभी लोग अपनी परम्परा और विधि के अनुसार पूजा कर सकते हैं। इसमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

इस मन्दिर के सम्बन्ध में एक जन-श्रुति है कि दक्ष प्रजापति का यज्ञ इसी स्थान पर हुआ था, जिसमें सती ने आत्म-दाह किया था। आज के दीघवारा को वहाँ के पण्डित 'दीघं-द्वार' का अपभ्रन्श बताते हैं और कहते हैं कि वहाँ 'दीर्घ-द्वार' था। 'श्री चण्डी' के त्रयोदश अध्याय के श्लोक ९ एवं १० का उल्लेख करते हुए पण्डित यह भी कहते हैं कि मेधा ऋषि से जगदम्बा के पूजनादि की शिक्षा ग्रहण कर राजा सुरथ और समाधि वैश्य ने इसी स्थान पर यज्ञ-कुण्ड की भस्म और गंगा की मृत्तिका को मिलाकर नव-दुर्गा की स्थापना की तथा तीन वर्षों तक साधनोपासना कर श्री अम्बिका का साक्षात्कार किया तथा मनोऽभिलषित वरदान प्राप्त किया।

पीठ के नीचे एक शिव-लिङ्ग है, जिससे लगा हुआ एक निकास है, जिससे शिव-लिङ्ग पर चढ़ाया हुआ जल प्रवाहित होता है। वह जल दूसरे छोर पर एक चतुष्कोण कुण्ड में गिरता है। इसे वहाँ के लोग तथा-कथित यज्ञ-कुण्ड बताते हैं। यह कुण्ड कभी नहीं भरता है, चाहे जितना भी जल चढ़ाया जाय। सुना जाता है कि इसे भरने का असफल प्रयास बेतिया महाराज द्वारा किया गया था, जिसका भयंकर दुष्परिणाम भी हुआ था।

निस्सन्देह यह एक आशु सिद्धि-दाता शक्ति-पीठ है। माँ का दरबार फौजदारी कोर्ट कहा जाता है। सच्चे मन-प्राण से रात में निवेदन करने पर उसी रात में ही निर्णय प्राप्त हो जाता है, यह बहुतों का निजी अनुभव है। फौजदारी कोर्ट में भी इतने शीघ्र निर्णय नहीं होता है। ऐसी दया-मयी हैं श्री अम्बिका भवानी, जो दीन-दुखियों एवं भक्तों पर सदैव दया करती हैं।

इस स्थान के साधक मणिपुर-वासी श्री गिरधारी दुबे जी अपने हाथों श्री भवानी को लँहगा अर्पित करते थे और माँ स्वयं उनके हाथ से लेकर पहन लेती थीं और तब किवाड़ स्वतः खुल जाता था। इसके बाद पुजारी-गण आभूषण, पुष्प-माल्यादि से शृङ्गार करते थे। उसके बाद से ही अब पीठ में लँहगा पहनाया जाने लगा है। अभी तक माँ का कोई वैसा दूसरा लाड़ला नहीं हुआ।

इसी स्थान के साधक श्री योगा बाबा थे, जिनकी धोती आकाश में ही सूखती थी। इसी स्थान के साधक श्री जगमणि दुबे जी थे, जिन्होंने मन्दिर में ही समाधिस्थ अवस्था में ब्रह्माण्ड-भेदन कर ब्रह्म-लोक गमन किया। उनकी धर्म-भार्या उनके पार्थिव शरीर के साथ स्व-गात्रोत्पन्न अग्नि में भस्म होकर सती हो गईं। यह स्थान उनके ग्राम दातापुर (मुजफ्फरपुर) में सती-स्थान के नाम से प्रसिद्ध है तथा सभी माङ्गलिक अवसरों पर इनकी पूजा की जाती है।

—श्री पं० जयमङ्गल दुबे

(७)

रोहतास के प्राचीन मन्दिर

प्राचीन मगध और कोशल के क्रोड़ में बसा हुआ रोहतास जनपद अनादि-काल से 'शाक्तोपासना' का केन्द्र रहा है। अभी भी 'चैता-गायन' और 'योगिनी-नृत्य' उस प्राचीन युग की याद दिलाते हैं, जब 'तन्त्राचार' यहाँ का मुख्य धर्म था। वैसे कुछ वर्षों पहले इसका नाम शाहाबाद था, जिसका मुख्य नगर आरा 'आरण्य' का अपभ्रन्श है। समूचे जनपद की शासिका 'आरण्य देवी' आरा में हैं, जिनका वर्णन 'चण्डी' के पृष्ठों में बहुत पहले निकल चुका है। रोहतास के मुख्य मन्दिर ये हैं –

१. **भलनी की 'श्री यक्षिणी देवी'**—पुराने शाहाबाद और रोहतास में ये घर-घर पूज्या हैं। विक्रमगञ्ज से बस द्वारा नटवार जाने पर, वहाँ से एक मील की दूरी पर यह मन्दिर है। मन्दिर के गुम्बज पर दो शेरों की

मूर्तियाँ विराजमान हैं। नीचे माँ की भव्य प्रतिमा है। इस पीठ का पूजा-कार्य, यहाँ के शाकल-द्वीपीय ब्राह्मणों द्वारा सञ्चालित होता है।

'चैत्र नवरात्र' के बाद यहाँ विशाल मेला लगता है। पहले बलि-प्रथा भी थी लेकिन इधर 'आर्य-समाज' के प्रभाव से बन्द है। इसका प्राचीन इतिहास विस्मृति के गर्भ में है। कुछ विद्वानों की मान्यता है कि यह मन्दिर 'हर्ष-युग' का है, जब इसके किनारे से सदा-नीरा 'शोण-भद्र नद' बहता था। इसके भौगोलिक प्रमाण दिए जा सकते हैं। समीप ही स्थित 'परशुराम-कुण्ड' और सहसराम से 'परशुराम' और 'सहस्र-बाहु' के पौराणिक युद्ध से भी इसका सम्बन्ध जोड़ा जाता है।

२. भगवती श्रीतारा चण्डी—सासाराम (रोहतास का मुख्यालय) से थोड़ी ही दूर पर 'कैमूर पहाड़ी' के नीचे, चट्टानों से निर्मित 'भगवती तारा' का मन्दिर देखने योग्य है। मूर्ति का केवल सिरवाला खण्ड है। मुखौटा सुवर्णाच्छादित है।

३. श्रीमुण्डेश्वरी देवी, उमापुर—भभुआ से चल कर भगवान आने पर, कैमूर-श्रेणी में ही ऊपर पहाड़ी पर 'श्री मुण्डेश्वरी देवी' की प्रभाव-शालिनी प्रतिमा है। राजकीय अभिलेखों के अनुसार यह प्रतिमा 'गुप्त-काल' की है और गुप्त आभिजात्य-काल का उत्कृष्ट नमूना है। विश्वास किया जाता है कि भगवती ने 'मुण्ड-बध' यहीं किया था। पहाड़ी के पार्श्व में 'भैरव', 'गणेश', 'पञ्च-मुखी शिव' इत्यादि की भी मूर्त्तियाँ हैं। यहाँ दर्शनार्थी एवं भक्तों का मेला लगा रहता है।

४. रोहतासगढ़ की श्रीदुर्गा देवी (रण-चण्डी)- डिहरी-रोहतास रेल्वे के रोहतास फोर्ट स्टेशन से २ मील पहाड़ी मार्ग चलने पर एक अनूठे शिव-मन्दिर के दर्शन होते हैं। इस मन्दिर के पास ही 'श्रीदुर्गा-देवी' का मन्दिर है, जो राजा मानसिंह का बनवाया कहा जाता है। ये रण-चण्डी हैं। वर्तमान में वहाँ एक भग्न मूर्ति पड़ी है और मन्दिर पुरातत्त्व-विभाग की देख-रेख में है। किसी समय यह शाक्तों का केन्द्र था। योग की शिक्षा और साधना के लिए चौरासी सीढ़ियोंवाले सहस्र-दल के कमल पर शङ्कर का उक्त भव्य मन्दिर बना है। चौरासी आसनों का यह मन्दिर अपने ढंग का अनूठा है। दोनों मन्दिर राजकीय नियंत्रण में होने से जन-सम्पर्क में कम हैं।

—श्री रामनन्दनप्रसाद

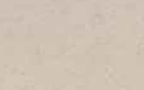

(८)

श्री 'चण्डी-स्थान' विराटपुर

बिहार प्रदेश में उत्तर-पूर्व रेलवे की एक लाइन 'बरौनी' से 'कटिहार' गई है। उस लाइन पर अवस्थित 'सहरसा' स्टेशन से २५ मील दक्षिण यह प्रसिद्ध तीर्थ-स्थल है। 'सहरसा' से 'सोन-वर्षा' तक बस, जीप आदि सवारियाँ मिलती हैं। 'सोनबरसा' से श्रीचण्डी-स्थान तक पक्की सड़क बनी है। रिक्शा, टमटम आदि सवारी मिलती है। वहाँ से श्रीचण्डी-स्थान 'विराटपुर' की दूरी चार मील है। 'सोन-वर्षा' से यह स्थान उत्तर-पूर्व में पड़ता है।

विराटपुर-स्थित मातेश्वरी चण्डी का मन्दिर सम्पूर्ण भारत में शक्ति के विशालतम मन्दिरों में से एक है। यह स्थान ५१ सिद्ध-पीठों में एक है।

तन्त्र-शास्त्र के अनुसार माता सती की आँख 'महिषी' की आदि-शक्ति माँ तारा हैं। वहीं सती की आँख गिरी थी। हाथ कात्यायनी हैं एवं गर्दन से नीचे का भाग 'विराटपुर' स्थित आदि-शक्ति माँ चण्डी हैं। ये तीनों स्थान एक दूसरे से समान दूरी पर त्रिकोणात्मक रूप में स्थित हैं।

विराटपुर की भगवती छिन्नमस्ता हैं। त्रेता-युग में महर्षि वशिष्ठ ने यहाँ माँ चण्डी की प्रतिमा प्रतिष्ठित की थी। सबसे पहले ये इन्हीं के द्वारा पूजित हुई थीं। महाभारत-कालीन राजा विराट के सिंह-दरवाजे पर माँ चण्डी की प्रतिमा स्थापित है। राजा विराट नित्य-प्रति माँ चण्डी की पूजा किया करते थे। माँ चण्डी के मन्दिर से सटे पश्चिम ओर राजा विराट का राज-भवन था। वर्तमान समय में भी यह स्थान सम-तल भूमि से काफी ऊँचा है।

पहले यह धार्मिक स्थान जंगलों से भरा हुआ था। यहाँ के निवासी गाय चराने के लिए जंगल में आया करते थे। कहा जाता है कि बाछी के स्तन से निकलती दूध की धारा भगवती की प्रतिमा पर गिरती थी। संयोग-वश एक दिन गाय चरानेवाले एक चरवाहे ने इस अद्‌भुत दृश्य को देखा और गाँव में जाकर उक्त घटना को व्यक्त किया। ग्राम-वासियों ने जाकर प्रत्यक्ष इस दृश्य को देखा, तो आश्चर्य-चकित हो गए। गाँववालों ने उक्त स्थल की खुदाई की, तो माँ चण्डी की प्रतिमा दिखाई दी। इसके बाद तुरन्त

ही उस स्थान की सफाई की गई। उसी दिन से माँ चण्डी की पूजा विधिवत् होती चली आ रही है।

आरम्भ में माँ चण्डी की प्रतिमा खुले आकाश में थी। 'जल-सीमा'-निवासी राजा प्राणसिंह की दूसरी रानी चमेली कुँवरि के अनुरोध से बन-गाँव-निवासी योगिराज स्वामी लक्ष्मीनाथ जी गोसाईं ने तीन दिनों तक माँ चण्डी की प्रतिमा के समक्ष मन्दिर-निर्माण की अनुमति हेतु तप किया और माँ चण्डी ने अन्त में उन्हें अनुमति दे दी। इस प्रकार रानी के खर्च से एवं स्वामी जी की देख-रेख में मन्दिर-निर्माण का कार्य आरम्भ हो गया। मन्दिर के बनने में लगभग दस वर्ष का समय लगा, तब कहीं जाकर ५२ हाथ ऊँचे इस विशाल मन्दिर का निर्माण पूरा हुआ। बीस हाथ की ऊँचाई पर मन्दिर के चारों तरफ आठ मन्दिर - स्तूप भी निर्मित हैं, जो माँ नव - दुर्गा के प्रतीक हैं।

मन्दिर के भीतर माँ चण्डी की प्रतिमा के अतिरिक्त माँ गहिल, माँ अष्ट-भुजी दुर्गा, माँ महिष-मर्दिनी एवं माँ काली की प्रतिमाएँ हैं। माँ चण्डी की प्रतिमा छिन्न-मस्ता हैं और चाँदी की बनी हुई हैं। यह चाँदी की प्रतिमा महाराजाधिराज शिवसिंह दरभङ्गा-नरेश की दी हुई है।

सबसे विचित्र बात यह है कि माँ चण्डी की प्रतिमा के बगल में एक छोटा-सा जल-कुण्ड है, जिसका निकास बाहर की ओर नहीं है। भगवती को कितना ही जल क्यों न चढ़ाया जाय, फिर भी कुण्ड का जो जल - स्तर है, उतना ही बना रहता है। कहते हैं कि माँ चण्डी को चढ़ाया हुआ जल गुप्त मार्ग से तारा एवं माँ कात्यायनी तक पहुँच जाता है। इस प्रकार यहाँ पूजा करने से तारा एवं कात्यायनी स्थान की भगवती की पूजा का भी फल भक्त-जनों को प्राप्त हो जाता है।

चण्डी-मन्दिर के अगले भाग में माँ चण्डी का सिंहासन है, जो काले पत्थर का है। इसके ऊपर लकड़ी की एक छोटी चौकी है, माँ चण्डी की पूजा के पश्चात् इसी सिंहासन की पूजा पहले की जाती है। इसके बाद ही अन्य बाहरी देवी-देवताओं की पूजा होती है।

मन्दिर के सन्निकट दक्षिण तरफ एक तालाब है। इस तालाब को 'जीवध्र कुण्ड' कहते हैं। ऐसा माना जाता है कि यह कुण्ड राक्षसों द्वारा खोदा हुआ है। भक्त-जन माँ चण्डी की पूजा इसी कुण्ड के जल से करते हैं।

जो निस्सन्तान स्त्रियाँ इस कुण्ड में स्नान कर माँ के पुजारी से आदेश - पुष्प लेकर माँ की पूजा करती हैं, उन्हें अवश्य ही पुत्र-लाभ होता है।

माँ चण्डी की पूजा हेतु एक ब्राह्मण पुजारी जी हैं, जो सुबह-शाम माँ की पूजा एवं आरती करते हैं। इसके लिए उन्हें ११ बीघे जमीन रानी की तरफ से प्राप्त है।

माँ चण्डी के प्राङ्गण में मङ्गलवार को मेला लगता है। इस दिन माँ चण्डी की विशेष पूजा होती है। शारदीय नवरात्र (दशहरा) के अवसर पर चण्डी-स्थान में विशेष मेले का आयोजन होता है।

—श्री पं० अमरनाथ झा, विराटपुर, सहरसा (बिहार)

(६)

मुंगेर के देवी-मन्दिर

१. 'श्रीचण्डी'-मन्दिर

बिहार के जिला-मुख्यालय, मुङ्गेर से बीस किलोमीटर की दूरी पर गङ्गा-तट पर 'श्रीचण्डी' - मन्दिर स्थित है और 'चण्डी - स्थान' के नाम से विख्यात है। मन्दिर एक पहाड़ी की कन्दरा में है, जिसका रूप अधोमुख कटाह (कड़ाही) के समान है। इसमें श्रीचण्डी के बाँएँ नेत्र की प्रतिमा है, जिसकी पूजार्चना होती है। इसके सम्बन्ध में स्थानीय जनता में यह मान्यता है कि सती का बाँयाँ नेत्र इस पहाड़ी पर गिरा। पहाड़ी में नेत्र-प्रतिमा स्वतः निर्मित है! यह स्थान सर्वथा गुप्त था। इसकी जानकारी जन-साधारण को नहीं थी। साधना के फल-स्वरूप केवल तत्कालीन राजा कर्ण को इसका ज्ञान था। वे प्रति-दिन निशार्चन कर श्रीचण्डी से सवा मन स्वर्ण प्राप्त करते थे और उसे दान कर देते थे।

वर्तमान मुङ्गेर तत्कालीन अङ्ग-राज्य की राजधानी थी। राजा कर्ण प्रति-दिन एक वृक्ष के मूल में निर्मित एक चबूतरे पर बैठकर दीन - दुखियों, भिक्षुकों को मुक्त हस्त से दान दिया करते थे। यह स्थान 'कर्ण-चौरा' के

नाम से आज भी विख्यात है तथा अभी तक वह वृक्ष है, जिसकी एक टहनी हिलाने से पूरा वृक्ष कम्पित हो उठता था। उस वृक्ष के मूल में निर्मित 'चक्षु-तारा' का ध्वंसावशेष था।

इस स्थान से थोड़ी ही दूर पर भयावह श्मशान है। पहले यह स्थान बिलकुल जन-शून्य था, परन्तु इन दिनों मन्दिर के पास कुछ बस्ती हो गई है। कुछ वर्ष पूर्व तक गुफा में आरती - पूजन झुककर ही किया जाता था क्योंकि उसकी ऊँचाई कम थी। वर्तमान समय में इसका जीर्णोद्धार कर मन्दिर को नया रूप प्रदान किया गया। अब उसमें खड़े होने में तथा पूजादि करने में कोई असुविधा नहीं है।

—पं० जयमङ्गल दुबे, ग्रा० ठींकहा, वैशाली (बिहार)

२. बड़ही की श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी

आधुनिक बिहार के मुङ्गेर जनपद के अन्तर्गत बड़ही थाने के क्षेत्र में भगवती 'बाला - त्रिपुर - सुन्दरी' का प्राचीन मन्दिर है। विक्रम की १५ वीं शताब्दी में 'बड़ही' ग्राम में श्री श्रीधर देव का जन्म हुआ। इनका पूर्व नाम श्रीधर ओझा था। इनकी उपासना से प्रसन्न होकर भगवती बाला - त्रिपुर-सुन्दरी प्रकट होकर इन्हें साक्षात् दर्शन देती थीं। गङ्गा-तट, जो बड़ही ग्राम के पूर्वी भाग में है, इनका साधना-स्थल था।

किंवदन्तियों के आधार पर उन्हें जन-कल्याण के लिए यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि श्रीबाला - त्रिपुर - सुन्दरी की एक चिर - स्थायी मूर्ति और मन्दिर होना चाहिए। अपने सङ्कल्प की पूर्ति के लिए उन्होंने अपनी आराध्या देवी श्रीबाला - त्रिपुर - सुन्दरी से याचना की। फलतः रात्रि में उन्हें स्वप्नादेश हुआ कि—'प्रातः - काल गङ्गा - तट पर जाओ। वहाँ तुम्हें एक खप्पर में शक्ति-स्वरूपा बाला प्रज्वलित शिखा के रूप में प्राप्त होंगी।' श्रीधर बाबा तत्क्षण समीपवर्ती गङ्गा-तट जा पहुँचे। प्रातः-काल वहाँ देखा कि एक देदीप्यमान ज्योति आ रही है और सभी ने उसे एक खप्पर में प्रवाहित होते पाया।

ज्योति-स्वरूपा जगज्जननी को भक्ति-भाव के साथ 'मृत्तिका-पिण्ड' में स्थापित किया गया। वे यहाँ आज भी जगदम्बा की महिमा प्रकाशित कर रही हैं। यह स्थान वर्षों से 'सिद्ध-पीठ' हो गया है और प्रति वर्ष हजारों लोग

यहाँ अर्चना-वन्दन करने को आते हैं। इसके सिवा यहाँ शत - चण्डी, सहस्र-चण्डी यज्ञादि भी होने लगे हैं।

इस स्थान पर प्रतिष्ठित भगवती परमेश्वरी की जो शिल्प - मूर्ति है, वह आज भी अतीत के इतिहास का स्मरण कराती है। वर्तमान काल के भी ऐसे अनेक प्रत्यक्ष उदाहरण हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि यहाँ लोगों के आर्त-नाद पर भगवती सद्यः द्रवित होती हैं और अभीष्ट वर प्रदान करती हैं। अन्तिम समय में श्री श्रीधर देव ने श्री जगदम्बा के पूज्य मृत्तिका - पिण्ड के सन्निकट ही चिर - समाधि ले ली और देवत्व को प्राप्त किया। उनकी निःस्वार्थ साधना ही के फल-स्वरूप श्रीबाला-त्रिपुर-सुन्दरी उज्ज्वल प्रतीक बनकर इस मन्दिर में आज भी विराज रही हैं।

—श्री हरिकान्तप्रसाद सिंह

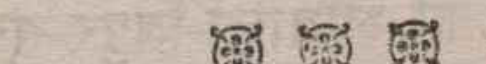

राँची के मुख्य देवी-मन्दिर

१. श्रीछिन्न-मस्ता-मन्दिर

छोटा नागपुर के हजारीबाग जिले में, 'रामगढ़ - छावनी' से लगभग ३० किलोमीटर दूर 'रजरप्पा मन्दिर' है। यहाँ 'माँ छिन्न - मस्ता' का एक प्राचीनतम मन्दिर है। यह पवित्र स्थल 'मेधा-ऋषि' के आश्रम एवं 'सुरथ और समाधि' की तपःस्थली के रूप में भी प्रसिद्ध है। यह दामोदर एवं भैरवी नदी के सङ्गम पर स्थित है, जो अभी भी पहाड़ों एवं जङ्गलों में घिरा हुआ है। माँ भगवती के परम भक्त एवं 'चण्डी' मासिक पत्रिका के आजीवन सदस्य श्री विपिनबिहारी शरण, कार्य-पालक अभियन्ता द्वारा यह स्थल आज बिहार का स्वर्ग बन गया है।

वर्तमान में यहाँ एक प्राचीनतम—'माँ छिन्न-मस्ता' का मन्दिर है। इसके अतिरिक्त 'माँ श्यामा' का एक नव - निर्मित मन्दिर है। आठ महा-विद्याओं—'माँ कमला, माँ बगला, माँ भैरवी, माँ षोडशी, माँ तारा, माँ धूमावती, माँ भुवनेश्वरी, माँ मातङ्गी के नवीन मन्दिर निर्मित हुए हैं। दसों

महा-विद्याओं की आकर्षक एवं ध्यान-सम्मत प्रतिमाएँ यहाँ विधि-वत् प्रतिष्ठित हैं। इनके अतिरिक्त 'भगवान् काल-भैरव' और 'भगवान् हनुमान' के भी मन्दिर हैं। नदी-सङ्गम पर एक 'तान्त्रिक - घाट' भी है। कोणार्क सूर्य-मन्दिर की भाँति यहाँ एक 'सूर्य-मन्दिर' का निर्माण भी हुआ है।

यहाँ जाने के लिए हजारीबाग एवं राँची से बस-सेवाएँ उपलब्ध हैं। रामगढ़-छावनी से ६ बजे प्रातः-काल से ८ बजे रात्रि तक ट्रेकर, जीप इत्यादि उपलब्ध रहते हैं। यात्रियों के रहने के लिए यहाँ विश्रामागार भी उपलब्ध हैं। बिहार सरकार की ओर से सुन्दर सड़क-मार्ग का निर्माण हुआ है, जिससे कार द्वारा भी जा सकते हैं।

यहाँ प्रति-दिन हजारों भक्त दर्शनार्थ-पूजनार्थ आते हैं। पर्व - तिथियों में साधकों द्वारा सविधि-पूजन व हवन इत्यादि भी सम्पन्न होते हैं। कतिपय 'हवन-कुण्ड' भी उपलब्ध हैं। भक्तों की सभी मनोकामनाएँ यहाँ पूर्ण होती हैं। 'माँ छिन्न-मस्ता' के पवित्र स्थल पर पहुँचते ही अपूर्व सिद्ध - पीठस्थ शान्ति का अनुभव होता है। अधिक जानकारी के लिए 'चण्डी' मासिक पत्रिका द्वारा प्रकाशित 'रजरप्पा' 'सिद्ध-पीठ' विशेषाङ्क देखिए।

२. नार का श्रीतारा-मन्दिर

यह मन्दिर दक्षिणी छोटा नागपुर के पलामू जिले में, चन्दवा-बालूमाथ सड़क पर, चन्दवा प्रखण्ड से १० किलोमीटर दूर पक्की सड़क के बगल में एक किलोमीटर पक्की उप-सड़क से जुड़ा है। यह 'माँ तारा' का प्राचीन मन्दिर है, जो 'नार' ग्राम में अवस्थित होने के कारण—'नार की तारा देवी' के नाम से प्रसिद्ध है। इसका निर्माण - काल लगभग १५०० ई. माना जाता है। यह सम्पूर्ण स्थल पहाड़ों और जङ्गलों से घिरा हुआ है। यहाँ 'माँ उग्रतारा' की श्वेत पत्थर की मुष्टिका - प्रमाण (चार अंगुल) की प्राचीन प्रतिमा है। समीप में उसी आकार की 'भगवती महा - लक्ष्मी' की भी श्वेत प्रतिमा है।

यहाँ भाद्र-मास छोड़कर प्रति-दिन 'छाग - बलि' होती है। शारदीय नवरात्रि में यहाँ 'महिष-बलि' भी होती है। यहाँ प्रति-दिन कुमारियों द्वारा 'देव्यपराध क्षमापण - स्तोत्र' का पाठ श्रवण-योग्य होता है। इस मन्दिर में प्रसाद के रूप में केवल मिश्री, नारियल, सिन्दूर एवं कपूर स्वीकार किया जाता है। यहाँ भोज-पत्र पर लिखी एक बहुत ही प्राचीन पूजा - पद्धति है,

जिससे नवरात्रि में पूजन होता है। इसके कुछ पृष्ठ नष्ट होने पर स्व-निर्मित स्याही से पुन. लिखे गए हैं।

३. श्रीदुर्गा-मन्दिर

राँची-जिलान्तर्गत राँची-टाटानगर राष्ट्रीय-पथ पर तमाड-प्रखण्ड से लगभग पाँच किलोमीटर पर देवरी का प्राचीनतम 'दुर्गा-मन्दिर' है। मन्दिर एवं प्रतिमा के दर्शन से प्राचीनता की स्पष्ट झलक प्रतीत होती है। यहाँ श्रीदुर्गा 'अष्ट-भुजा' हैं। मन्दिर के निर्माण-अवधि की सूचना प्राप्त नहीं है। मुख्य सड़क पर 'देवरी का प्राचीनतम दुर्गा-मन्दिर' का बोर्ड लगा हुआ है।

एक किंवदन्ती के अनुसार अंग्रेजों द्वारा इस मन्दिर को तोप से उड़ाने का प्रयास किया गया था, किन्तु मन्दिर को उड़ानेवालों का स्थल पर ही देहान्त हो गया। मन्दिर आज भी अपनी प्राचीनता प्रदर्शित कर रहा है। यहाँ अनेकों भक्तों की मनोकामनाएँ पूरी हुई हैं। माँ दुर्गा के मन्दिर के सामने 'बलि-स्थल' है, जहाँ 'छाग-बलि' सम्पन्न होती है। मन्दिर के स्थायी पुजारी स्थानीय आदि-वासी जाति के वंशज हैं, वे बड़े ही सुन्दर ढङ्ग से स्थानीय भाषा में माँ की प्रार्थना करते हैं। मङ्गलवार के दिन यहाँ ब्राह्मण पुजारी रहते हैं। मन्दिर १० बजे रात्रि तक खुला रहता है। गर्भवती देवियों को इस स्थान पर आना अज्ञात कारणों से मना है।

—श्री छत्रधारीलाल दास

(११)

चम्पारण के प्रमुख देवी-स्थान

देवतात्मा हिमालय की गोद में बसा चम्पारण अपने अञ्चल में सदियों का इतिहास छिपाए बैठा है। यह वही चम्पकारण्य है, जो आदि - कवि 'वाल्मीकि' से लेकर 'नाथ-सम्प्रदाय' के प्रवर्तक ब्रह्मलीन योगि-राज 'गोरक्ष-नाथ' की तप-स्थली रहा है, यहाँ के कुछ प्रमुख देवी-स्थान ये हैं—

१. श्रीवैराटी देवी

कभी राजा 'विराट' की यहाँ राजधानी थी। उनकी उपासिता देवी 'श्री वैराटी' हैं। घन-घोर जङ्गलों के बीच 'थारु' और 'ऊराँव' जन-जाति की

आबादी में अवस्थित यह मन्दिर आज-कल चौहान क्षत्रियों की देख-रेख में है। 'चैत्र नवरात्र' में विशेष मेला लगता है और देवी को रोट चढ़ता है। यहाँ 'बलि-प्रथा' का प्रचलन विशेष रूप से है।

२. श्रीचण्डी-स्थान

अरेराज से चार मील दूर, यह मन्दिर अब खण्डहर-रूप में विद्यमान है। करीब दो हजार वर्ष पहले यह एक भव्य मन्दिर रहा होगा। यहाँ अभी भी बिल्व - वृक्षों के जङ्गल हैं। इनके पार्श्व में दीघा में प्रति नवरात्र-मेला लगता है। वैसे यहाँ अरेराज में 'श्री सोमेश्वर महा - देव' का मन्दिर भी जाग्रत-पीठ है।

३. श्रीसहोदरा स्थान

बेतिया में बगहा के बस-मार्ग पर, जामनियाँ ब्लाक में ठोढ़ी पहाड़ी के पार्श्व में 'श्रीसहोदरा देवी' का प्राचीन मन्दिर है, मूर्त्ति बहुत ही प्राचीन लगती है, जो किसी शिला - खण्ड को तराश कर बनाई गई है। सामने ही 'पीठ' है, जहाँ विधि-वत् बलि होती है। प्रति-वर्ष चैत्र-नवरात्र में विशाल मेला भी लगता है। मन्दिर के निकट कई गुप्त सुरङ्गें हैं। एक पत्थर पर किसी के चरण उत्कीर्ण हैं। इसके बारे में बहुत सी लोक-कथाएँ प्रचलित हैं। सत्यान्वेषण की आवश्यकता है। नेपाल का सामीप्य होने कारण के यहाँ बहुत ही प्राचीन रहस्यों के छिपे होने की सम्भावना है।

—श्री रामनन्दनप्रसाद

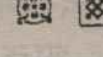

(१२)

मधुबनी के प्रसिद्ध देवी-मन्दिर

१. **श्रीदुर्गा-स्थान**—यह मन्दिर मधुबनी जिले के 'बेनी पट्टी' अनुमण्डल के समीप है। यहाँ भगवती दुर्गा की मूर्ति है। यहीं महान् कवि कालिदास को दुर्गा ने वरदान दिया था।

सुन्दरनगर, उच्चैट में भगवती की प्रतिमा अति प्राचीन काल से विराजमान है। कहते हैं कि यहाँ एक 'गुरु - आश्रम' स्थापित था, जिसमें

महा-कवि कालिदास शिष्य के रूप में थे। सन्ध्या-समय आश्रम के गुरु जी प्रति-दिन एक शिष्य को मन्दिर में 'दीप' जलाने हेतु भेजते थे। एक बार शिष्यों ने गुरु जी से 'दीप' जलाने के लिए 'कालिदास' को भेजने का निवेदन किया। गुरु का आदेश पाकर कालिदास मन्दिर गए। उन्होंने 'दीप' को जलाया और प्रणाम-स्वरूप जलते हुए 'दीप' की लौ एवं धूप-दानी की राख दोनों हाथों में लगाकर जगदम्बा की मूर्ति पर लगा दिया। माँ अति प्रसन्न होकर प्रकट हो गईं। माँ ने वरदान माँगने के लिए कहा। कालिदास ने 'विद्या-प्राप्ति' का वर माँगा।

इस किंवदन्ती के आधार पर आज भी 'यज्ञोपवीत-संस्कार' के बाद, इस क्षेत्र के लोग अपने बच्चे को भगवती दुर्गा का दर्शन कराते हैं, जिससे महा-कवि कालिदास की प्रतिभा अपने बच्चों को प्राप्त हो सके।

२. श्रीभद्र-काली मन्दिर——यह सिद्ध प्राचीन मन्दिर मधुबनी जिले के 'कोईलखा' ग्राम में अवस्थित है। राज बनैली - गढ़ की रानी स्व० चन्द्रावती द्वारा इस मन्दिर का पुनर्निर्माण हुआ है।

३. श्रीदुर्गा-शक्ति-पीठ——यह 'दुर्गा - मन्दिर' मधुबनी जिले के झंझारपुर अनुमण्डल में घोघरडीहा में है। यहाँ पिछले ७० वर्षों से लगातार सामूहिक 'नवरात्र-पूजा' का आयोजन हो रहा है।

४. श्रीसाईं-स्थान——यह मन्दिर झंझारपुर, पूर्वोत्तर रेल्वे के लौकता लाइन में 'वाचस्पति स्टेशन' से १/२ कि. मी. दक्षिण-पूर्व ढाढ़ी ग्राम में अवस्थित है। यह स्थान विश्व-विख्यात स्व. पं. वाचस्पति मिश्र का जन्म-स्थान भी है। यहाँ पर अनेक उच्च कोटि के साधक हो चुके हैं।

५. श्रीदुर्गा-मन्दिर——यह मन्दिर मधुबनी से ढाई कि. मी. दूर उत्तर मङ्गरौनी में स्थित है। यहीं सिद्ध शाक्त - साधक पं. मदन उपाध्याय का जन्म हुआ था। यह स्थान जाग्रत् शक्ति-पीठ है। हाल ही में इस स्थान के सञ्चालन-कर्ता पं. मुनेश्वर झा प्रसिद्ध तान्त्रिक हुए। इस मन्दिर के समीप में अनेक भगवती-मन्दिर हैं।

६. भगवती शाकम्भरी——यह मन्दिर झंझारपुर - लौकहा रेल्वे लाइन में 'वाचस्पति स्टेशन' से ५ कि. मी. उत्तर सिसरौलिया में स्थित है। यहाँ भगवती की प्राचीन व दुर्लभ मूर्ति है।

७. भगवती राज-राजेश्वरी——मधुबनी शहर से १० कि. मी. उत्तर डोकहर में भगवती राज-राजेश्वरी का सुन्दर मन्दिर अवस्थित है।

८. **सिद्ध-काली-पीठ**—यह मन्दिर मधुबनी मुख्य शहर से ५ कि. मी. उत्तर, 'जितवारपुर' के पास हरिनगर में है। यहाँ कुछ अन्य मन्दिर भी हैं। इस मन्दिर के पृष्ठ भाग में, लिङ्ग-रूप में, भगवान् भैरव का स्थान है, जो अन्यत्र दुर्लभ है।

९. **श्रीकाली-मन्दिर**—राज दरभङ्गा अधीन यह मन्दिर भौआड़ा में मधुबनी 'पुलिस लाइन' के निकट है।

१०. **श्रीकाली मन्दिर**—राज दरभङ्गा अधीन यह मन्दिर मधुबनी के मुख्य शहर में रेल्वे स्टेशन के निकट है।

११. **श्रीकाली मन्दिर**—यह मन्दिर मधुबनी जिले के अन्तर्गत 'जयनगर' रेल्वे स्टेशन से २१ कि. मी. दूर पूर्व-उत्तर दिशा में नेपाल-सीमा के समीप लदनिया में है।

१२. **श्रीकाली मन्दिर**—यह मधुबनी से लगभग १० कि. मी. दूर पश्चिम सतलखा में है।

१३. **श्रीतारा मन्दिर**—यह मन्दिर झंझारपुर-लौकहा रेल्वेलाइन के 'खुटौना' स्टेशन से पश्चिम ७-८ कि. मी. दूरी पर खोजापुर में है। आज से लगभग तीस-चालीस वर्ष पूर्व यहाँ भगवती तारा की मूर्ति स्थापित की गई। यह मधुबनी जिले के 'बाबू-बरही' प्रखण्डान्तर्गत है।

(१३)

सहरसा के प्रसिद्ध शक्ति-पीठ

१. **भगवती उग्रतारा मन्दिर**—यह मन्दिर बिहार प्रदेश के सहरसा जिले से १४ कि. मी. पश्चिम महिषी ग्राम में अवस्थित है, जो 'धर्ममूला नदी' के किनारे स्थित है। वर्तमान मन्दिर लगभग ४०० वर्ष प्राचीन है। इसके पूर्व का इतिहास उपलब्ध नहीं है। यहाँ वशिष्ठ-आराधिता 'भगवती तारा' की सुन्दर मूर्ति है। यह मूर्ति पत्थर से निर्मित है। कमल - पुष्प-नाल भी पत्थर का है।

इस मन्दिर के समीप जगद्-विख्यात पण्डित - राज 'मण्डन-मिश्र' का पुण्य - स्थान है। यहाँ पर 'भारती संस्कृत महा - विद्यालय' भी है। आदि-शङ्कराचार्य का मण्डन मिश्र से प्रसिद्ध शास्त्रार्थ यहीं पर हुआ था।

वर्तमान काल में भी यह सिद्ध - स्थान अनेक साधकों की जन्म-स्थली रहा है। यहाँ अनेक साधक श्रीतारा-भक्त रहे हैं। यथा—स्व. पं. वेणीपति मिश्र, स्व. कालिकानन्द ठाकुर, मधुबनी - नरेश स्व. श्री १०८ पूज्य राजा दुर्गादत्त जी सिंह तथा उनके पौत्र स्व. श्री तारानन्द जी, कौलावधूत स्व. सुधाकर जी ठाकुर। 'चण्डी' के प्रसिद्ध लेखक व विद्वान् स्व. 'तत्त्वचन्द्र' बाबा जयानन्द झा भी यहीं के थे।

१. **भगवती चण्डिका मन्दिर**—भगवती का यह विशाल मन्दिर सहरसा से लगभग २० कि. मी. पूर्व विराटपुर में स्थित है। इस मन्दिर में बीसा यन्त्र नीले प्रस्तर पर अङ्कित है। यहाँ अनेक सिद्ध साधकों का आविर्भाव हुआ है, जिनमें स्व० परमहंस लक्ष्मीनाथ गोसाईं और साधक-प्रवर पण्डित जय-कृष्ण मिश्र प्रमुख हैं। इन दोनों साधकों की विभूति अकथनीय है।

२. **भगवती कात्यायनी का मन्दिर**—यह मन्दिर 'सहरसा-मानसी' रेल - मार्ग पर 'बदलाघाट' स्टेशन से १ कि. मी. दक्षिण - पूर्व में 'वागमती नदी' के उत्तर-तट पर स्थित है। यह शक्ति - पीठ अत्यन्त प्राचीन व उग्र है।

३. **श्रीकङ्काली-मन्दिर**—सहरसा से १५ कि. मी. उत्तर में पञ्च-गछिया गाँव के पूर्व में यह मन्दिर स्थित है। इस मन्दिर के पास ही 'राम-ठाकुर' नाम से प्रसिद्ध एक ब्रह्म-स्थल भी है।

४. **दश महा-विद्या-मन्दिर (प्रथम)**—यह मन्दिर सहरसा से १३ कि. मी उत्तर में पटोरी नामक गाँव में स्थित है। पञ्चगछिया - रियासत के नरेशों ने इस एक ही मन्दिर में क्रम-पूर्वक दशो महा - विद्याओं की प्रतिष्ठा की, जिनकी इस क्षेत्र में बड़ी मान्यता है।

५. **दश महा-विद्या-मन्दिर (द्वितीय)**—सहरसा-सुपौल के रेल-मार्ग पर गढ़ बरुआरी स्टेशन से १ कि. मी. पश्चिम में बरुआरी गाँव में खारदाहा नामक नदी के पश्चिमी तट पर दश महा - विद्याओं का यह दूसरा मन्दिर दर्शनीय है। बरुआरी के राज-वंश के लोग भगवती के बड़े भक्त और तन्त्र-शास्त्र के अच्छे ज्ञाता ही नहीं, उत्तम साधक भी थे। उन्हीं की देन यह मन्दिर है।

६. **श्रीदुर्गा-मन्दिर**—सहरसा से ८ कि. मी. पश्चिम बनगाँव के मध्य में यह भव्य और विशाल मन्दिर है। इस गाँव में लगभग ढाई हजार

ब्राह्मण-परिवार हैं, जो सभी माँ के अनन्य भक्त हैं। इस दुर्गा - मन्दिर के प्रभाव से शारदीय नवरात्र में सविधि बलिदान-पूर्वक बड़े उत्साह से समारोह प्रति वर्ष मनाया जाता है।

७. श्रीवन-दुर्गा-मन्दिर—सहरसा से १½ कि. मी. उत्तर की ओर 'देवना डीह' नाम से सवा सौ बीघे का एक पर्वताकार मिट्टी का बुर्जा (लिङ्ग) है, जिसके पूर्वी भाग में श्रीवाणेश्वर महा - देव का भव्य मन्दिर है। उस मन्दिर से पश्चिम की ओर घने जङ्गल के मध्य में एक छोटे-से मन्दिर में श्रीवन-दुर्गा की भव्य प्रतिमा प्रतिष्ठित है। ग्राह (मगर) पर आसीन भगवती वन-दुर्गा अपने दर्शनों से भक्तों को रोमाञ्चित कर देती हैं और उनकी सभी कामनाएँ पूर्ण करती हैं। यह साधकों का साधना - क्षेत्र रहा है।

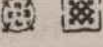

(१४)

दरभंगा के प्रसिद्ध देवी-स्थान

१. श्रीश्यामा-मन्दिर—स्व. महाराजाधिराज सर कामेश्वर सिंह निर्मित यह मन्दिर दरभङ्गा जंक्शन रेल्वे स्टेशन से १ कि. मी. पश्चिम, एक सुरम्य पोखरे के पार उत्तर में स्थित है। प्रस्तर-निर्मित यह मन्दिर अत्यन्त कला-पूर्ण है। पोखरे के चारों तटों पर पूर्व के प्रत्येक महाराजा के अपने-अपने इष्ट-देवता के भव्य मन्दिर हैं।

२. श्रीचामुण्डा-स्थान—दरभङ्गा-निर्मली के रेल-मार्ग पर बमौरिया स्टेशन से ५ कि. मी. दक्षिण पचही नामक गाँव से १ कि. मी. दक्षिण में यह स्थान एक महा-श्मशान में है। यहाँ न तो प्रतिमा है और न मन्दिर, किन्तु यहीं दरभङ्गा-राज-वंश-सम्भूत श्री इन्द्रपति सिंह जी ने, जो 'चण्डी' के प्रख्यात लेखक 'श्यामानन्दनाथ' के नाम से प्रसिद्ध हुए, अपनी सतत साधना की थी और शक्ति - तत्त्व के परम ज्ञानी हो गए। इनके पूज्य पिता श्री तुलापति सिंह जी की भी यही साधना - स्थली थी। अपने समय के वे एक श्रेष्ठ अग्निहोत्री साधक थे। इस स्थान पर भगवती चामुण्डा 'पिण्डिका'-रूप में हैं।

३. **श्रीम्लेच्छ-मर्दिनी भगवती**—दरभङ्गा-नगर के अन्तर्गत जिस स्थान पर इन भगवती का विशाल मन्दिर विद्यमान है, उस क्षेत्र में किसी समय एक म्लेच्छ का बड़ा आतङ्क था। लोगों के आर्त होकर श्रीजगदम्बा की प्रार्थना करने पर माँ ने प्रकट होकर उस दुष्ट म्लेच्छ का संहार कर दिया और स्वयं प्रतिमा-रूप में वहीं अवस्थित हो गईं। बाद में भक्त-जनों ने मन्दिर बनवाकर उनकी प्रतिष्ठा की।

४. **श्रीअहल्या-स्थान**—दरभङ्गा-जिले के अन्तर्गत कमतौल रेल्वे स्टेशन से कुछ ही दूर दक्षिण में यह स्थान है। यहीं ब्रह्मा की मानस - पुत्री और गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या को भगवान् श्री रामचन्द्र ने शाप-मुक्त किया था। महा - भारत के अनुसार श्री बलभद्र भी यहाँ पधारे थे। राम-नवमी के पर्व पर यहाँ विशाल मेला लगता है।

५. **श्रीतारा-स्थान**—दरभङ्गा जनपद के घनश्यामपुर से होकर नवटोल-क्षेत्र में गलमा ग्राम के निकट भगवती तारा का यह सिद्ध स्थान शाम्भव साधकों को बहुत प्रिय है।

❀ ❀ ❀

(१५)

पूर्णिया के देवी-मन्दिर

१. **भगवती पूरण देवी**—पूर्णिया नगर के ईशान कोण में श्मशान-भूमि में यह श्रीदक्षिणा-कालिका का मन्दिर है। यहाँ चिर-काल से शाक्त-साधक साधना करते रहे हैं।

२. **श्रीदक्षिण-कालिका मन्दिर**—पूर्णिया से लगभग १५ कि. मी. दूर ईशान - कोण में अररिया के पूर्व कोशी नदी के पश्चिमी तट पर श्मशान के मध्य में भगवती दक्षिण-कालिका की एक प्राचीन प्रतिमा स्थापित थी, जिसे आस-पास की आस्तिक जनता ने एक फूस की झोपड़ी में सुरक्षित कर रखा था। संयोग-वश वहाँ एक बङ्गाली साधक आ पहुँचे। उन्होंने यहाँ अपनी साधना प्रारम्भ की। उनके तप के प्रभाव से झोपड़ी के स्थान पर एक भव्य मन्दिर बन गया। साथ ही एक सुन्दर पुष्प-वाटिका भी बन गई। अब वहाँ प्रातः और सन्ध्या दोनों समय माँ का विधि-वत् अर्चन-पूजन होता रहता है।

३. **श्रीदुर्गा-स्थान**——पूर्णिया जनपद के खत्रासपुर में श्रीदुर्गा-स्थान की बड़ी मान्यता है। अतीत काल से वहाँ बलि-प्रदान होता आ रहा है। सखुआ का एक खम्भा वहाँ गड़ा था, जिसमें छाग को बाँधा जाता था। कई वर्षों के सूखे उस खम्भे में एकाएक अंकुर फूटने लगे और नए पत्ते निकल आए। इस चमत्कार से जनता की भक्ति - भावना को बड़ा बल मिला और वहाँ बड़ी श्रद्धा के साथ पूजार्चन कर लोग अपनी मनोकामनाओं को फलीभूत करते हैं।

(१६)

भभुआ की श्रीमण्डलेश्वरी देवी

पूर्वी रेलबे के मोहनिया स्टेशन से भभुआ पहुँचते हैं। वहाँ से दक्षिण भगवानपुर गाँव के पास कैमूर पहाड़ी पर 'श्रीमण्डलेश्वरी देवी' का गुप्त-कालीन मन्दिर है। इस प्राचीन मन्दिर में 'महिष - मर्दिनी' देवी की भव्य प्रतिमा प्रतिष्ठित है। भभुआ-क्षेत्र का यह मुख्य तीर्थ है।

(१७)

मुजफ्फरपुर का त्रिपुर-सुन्दरी-मन्दिर

मुजफ्फरपुर के रमना मुहल्ले में श्मशान - भूमि में स्व. राय साहब उमाशङ्करप्रसाद ने मधुबनी के प्रख्यात साधक स्व. पं. निरसन मिश्र के द्वारा भगवती त्रिपुर-सुन्दरी की स्थापना कराई। राय साहब के कोई पुत्र नहीं था। मिश्र जी के शुभाशीष से उन्हें पुत्र-लाभ हुआ। उसी के उपलक्ष्य में उक्त मन्दिर का निर्माण हुआ और भगवती की प्रतिष्ठा की गई। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि भगवती की प्रतिमा का निर्माण ब्रह्मीभूत श्री स्वामी विद्यारण्य जी के निर्देशानुसार हुआ, जो श्रीविद्या के मर्मज्ञ सिद्ध महात्मा थे। फलतः भगवती श्रीत्रिपुर-सुन्दरी की जैसी छवि उक्त मन्दिर में दृष्टि-गत होती है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

(१८)

वासुकिनाथ का श्रीतारा-मन्दिर

भगवान् वासुकिनाथ के मन्दिर से १½ कि. मी. दूर पूर्व अद्वैता नामक नदी के पश्चिमी तट पर एक प्राचीन श्रीतारा - मन्दिर अवस्थित है। इस मन्दिर और इसमें प्रतिष्ठित प्रतिमा का इतिहास अज्ञात है, किन्तु कुछ वर्षों से पूज्य स्वामी अद्वैतानन्द सरस्वती द्वारा वहीं 'अद्वैताश्रम' की स्थापना करने से मन्दिर की भव्यता और महिमा बढ़ गई है। उनकी शिष्या वङ्ग-कन्या कुमारी शाकम्भरी की सतत साधना से 'श्रीतारा-मन्दिर' की ख्याति देश-व्यापी हो चुकी है।

(१९)

नालन्दा का श्रीचण्डी-स्थान

किंवदन्तियों के अनुसार ऐतिहासिक नगर नालन्दा के समीप चण्डी नामक स्थान का 'चण्डी-मन्दिर' सन् १७७३ के पूर्व का बना है। कहा जाता है कि मन्दिर बनने के पहले इस स्थान की भूमि बञ्जर थी और जङ्गली वनस्पति से आक्रान्त थी। महा-नदी फल्गु से निकल कर गङ्गा में प्रवाहित थी, जो आज भी है। बञ्जर-भूमि को उपजाऊ बनाने के लिए उसकी खुदाई प्रारम्भ की गई। खुदाई के समय दो शिला-खण्ड प्राप्त हुए, जिनमें से एक में सिंहासीना चतुर्भुजा माँ दुर्गा की छवि थी, तो दूसरे में खड्ग और मुण्ड-हस्ता माँ काली विराजमाना थीं। इन दोनों प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा पण्डित गरिवन पाण्डेय द्वारा कराई गई और लोग माँ दुर्गा के नाम से उनका पूजन करने लगे। बाद में सन् १८८५ में इनका नामकरण 'माँ चण्डी' किया गया। तब से इस स्थान का नाम 'चण्डी' पड़ गया।

(२०)

सासाराम के देवी-मन्दिर

१. भलुनी-क्षेत्र की अधिष्ठात्री : श्रीयक्षिणी देवी

बिहार राज्य के जिला शाहाबाद की सब - डिवीजन सासाराम के थाना दीवारा के अन्तर्गत भलुनी धाम में 'श्रीयक्षिणी देवी' का एक प्राचीन मन्दिर है। यह आरा सासाराम लाइट रेल्वे के विक्रमगञ्ज स्टेशन से ७ मील पश्चिम विक्रमगञ्ज मोहनियाँ रोड से १ मील उत्तर स्थित है।

मन्दिर का घेरा १ बीघे भूमि तक है। घेरे के अन्दर ५ मन्दिर हैं, जिनमें मुख्य मन्दिर आद्या शक्ति का है, जो बीच में स्थित तथा विशाल है।

देवी-मन्दिर के वाम - पार्श्व में भगवान् शङ्कर का 'स्वयम्भू लिङ्ग' स्थापित है तथा सामने 'काल-भैरव' का मन्दिर है। भैरव - मन्दिर के वाम पार्श्व में आच्छादित हवन - कुण्ड है। अग्नि - कोण में 'शीतला देवी' तथा नैऋत्य-कोण में 'विश्व-कर्मा' का मन्दिर है। घेरे के मुख्य द्वार पर लोहे का बहुत बड़ा फाटक लगा हुआ है। फाटक के ऊपर विशाल - काय सिंह की प्रतिमा है।

मन्दिर के पूर्व सामने विशाल सरोवर है, जिसके चारों तरफ पक्का घाट बँधा हुआ है तथा मन्दिर से पोखरे तक चौड़ी पक्की सड़क बनी हुई है। यात्री उसी पोखरे में स्नान करके दर्शन करने जाते हैं।

मन्दिर से उत्तर की ओर एक विस्तृत भू-भाग में एक पुष्प - वाटिका है, जिसे 'यक्षिणी पुष्प-वाटिका' कहते हैं। वासन्तिक नवरात्र में यहाँ बड़ा भारी मेला लगता है, जो एक मास तक रहता है। शुक्रवार और सोमवार को बराबर भीड़ होती है।

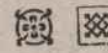

२. सहसराम की श्रीतारा-चण्डी

प्राचीन काल के भर्ग - जनतन्त्र की राजधानी 'सुसुमार गिरि' का आधुनिक नाम सहसराम या सासाराम है। इसके दक्षिण-पूर्व में स्टेशन से २॥ मील पश्चिम सहसराम-तिलोथू मार्ग पर कोकनद (काव नदी) के किनारे चन्दन पीर की पहाड़ी की एक गुफा में 'श्रीतारा-चण्डी देवी' का मन्दिर है।

बगल की गुफा में ११वीं शती के शासक धवलप्रताप का शिला - लेख है। किंवदन्ती है कि उक्त 'श्रीतारा-चण्डी' सहस्रबाहु को मारनेवाली 'श्रीभद्र-काली' हैं, किन्तु कुछ विद्वान् इन्हें 'श्रीतारा - देवी' मानते हैं। बौद्ध भी इन देवी का पूजन करते हैं। देवी-मन्दिर के दक्षिण पहाड़ी पर उस किले का खण्डहर है, जिसे वत्स-राज उदयन ने लाल पत्थरों से बनवाया था। किसी समय यह स्थान बौद्ध तान्त्रिकों का केन्द्र था।

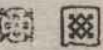

(२१)

आरा के देवी-मन्दिर

१. आरा की अरण्य देवी

आरण्य देवी का प्रसिद्ध मन्दिर शाहाबाद के जिला - मुख्यालय आरा में अवस्थित है। आरा नामक यह नगर उत्तर रेलवे की दिल्ली - कलकत्ता मुख्य लाइन पर पटना से कोई ३१ मील पहले पड़ता है। आरा और आस-पास के स्थानों में यह मन्दिर 'आयरन' देवी के नाम से विख्यात है। निश्चित ही यह संस्कृत के 'अरण्य' का अपभ्रंश है। आरा नगर का नाम भी कभी 'आरण्य-नगर' रहा होगा और तब देवी के नाम पर ही वह नाम पड़ा होगा। इसी तथ्य से स्थान की प्राचीनता स्पष्ट होती है।

आरा नगर वस्तुतः बहुत ही प्राचीन शहर है, जिसका ऐतिहासिक और पौराणिक महत्त्व है। पूरा क्षेत्र वनों से पूर्ण था, इस कारण इसका पुरातन नाम 'आरण्य' था, जो समय के साथ बदल कर आज 'आरा' बन गया है। इस बात की पुष्टि माँ आरण्य देवी के नाम से होती है, जो किसी के द्वारा स्थापित नहीं हैं। आरण्य देवी वास्तव में 'वन - देवी' हैं। माँ आरण्य देवी नगर की देवी हैं और उनकी प्रतिमा स्वतः - प्राप्त हुई थी, जिसकी भक्तों ने बहुत समय तक पूजा की व बाद में वहाँ मन्दिर का निर्माण हुआ।

किंवदन्तियों के अनुसार बकासुर नामक राक्षस इन देवी की पूजा किया करता था। धीरे - धीरे जङ्गल समाप्त होकर नगर बन गया और लोगों ने उस स्थान पर मन्दिर का निर्माण कराया। मन्दिर में काले पत्थर

की दो आदम - कद मूर्तियाँ हैं । जो छोटी देवी दिखाई पड़ती हैं, वही मूल मूर्ति है। दूसरी बड़ी मूर्ति मन्दिर बनाते समय बनवाई गई, ऐसा लोगों का कहना है।

मन्दिर के मुख्य द्वार पर दाहिनी ओर काल-भैरव और श्रीगणेश जी का मन्दिर है। मुख्य द्वार के सामने से ही उक्त श्री देवी जी के दर्शन होते हैं। मन्दिर का नव - निर्माण होते समय इस मन्दिर के प्राङ्गण में सर्वश्री राम, लक्ष्मण, सीता और राधा-कृष्ण तथा लक्ष्मी - नारायण एवं हनुमान के मन्दिरों का भी भक्तों द्वारा निर्माण कराया गया।

यह बहुत ही जागृत स्थान है और इस जगह पर पूजन-अर्चन करने-वालों को मनोवाञ्छित फल अवश्य प्राप्त होता है। पहले इस स्थान पर बलि-पूजा भी की जाती थी, जो भक्तों की मनोकामना पूर्ण होने पर उनके द्वारा दी जाती थी, लेकिन इधर कुछ वर्षों से यहाँ बलि-पूजा बन्द हो गई है।

यह मन्दिर मुहल्ला चौक में आरा - पटना मार्ग से थोड़ी दूर हटकर स्थित है। इसके निकट ही इस क्षेत्र की प्रसिद्ध व्यापारिक मण्डी है।

आस-पास के नगर-ग्रामों से नित्य-प्रति श्रद्धालु स्त्री - पुरुष दर्शन हेतु आते हैं। बहुत से लोग प्रातः और सन्ध्या - पूजा के लिए भी आते हैं। लोगों की मनोकामनाएँ पूर्ण होने से वे मन्दिर की चौखट में चाँदी के सिक्के जड़वाते रहे हैं और आज भी मनोकामना पूर्ण होने पर लोग प्रायः सिक्के जड़वाते हैं।

बहुत पहले, जब यह स्थान और आस - पास का इलाका जङ्गलों से ढँका था, यहाँ कोई राजा शिकार के लिए आया और उसे देवी की वह मूर्ति जङ्गल में पड़ी मिली। इस धूल - धूसरित मूर्ति को उसने अपने हाथी पर लदवाया और ले जाकर पास बहती गाँगी नदी में विसर्जित कर दिया। यह छोटी-सी नदी अब भी इस नगर के पार्श्व में बहती है और इसे, इससे कुछ ही दूर बहती गङ्गा की 'छाड़न' कहते हैं। मूर्ति को जल में प्रवाहित कर जब राजा घर लौटा, तो पाया कि वहाँ हाहाकार मचा हुआ है। पता लगा कि उसका एक-मात्र पुत्र मृत पड़ा है! राजा को पुत्र की इस आकस्मिक मृत्यु पर दुःख तो हुआ ही, आश्चर्य भी कुछ कम नहीं हुआ।

तभी शिकार के साथ गए एक दरबारी ने कहा कि 'इस अचानक मृत्यु का कारण देवी - प्रकोप प्रतीत होता है।' राजा को बात लग गई। अन्त्येष्टि रुकवा कर वह पूजा-घर में चला गया। उसने देवी से क्षमा-याचना

की और मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि यदि उसका पुत्र जीवित हो गया, तो वह एक भव्य मन्दिर बनवा कर देवी की स्थापना करेगा। चमत्कार होते हैं और हुआ भी ! इसके पहले कि राजा पूजा-घर से बाहर आए, पुत्र जीवित हो गया। फलतः राजा ने मन्दिर का निर्माण कराकर उसमें देवी की प्रतिष्ठा की। बाद में देवी ने अपनी पुजारिन को स्वप्न दिया कि बगल में उनकी एक सहेली की भी मूर्ति बैठे और तब से मन्दिर में देवी की दो मूर्तियाँ विराजमान हैं।

'आरण्य देवी' का प्रभाव अगल-बगल और दूर-दूर के इलाके तक है। लोग मनोकामना-पूर्ति के लिए यहाँ सैकड़ों की संख्या में आते रहते हैं। नवरात्रियों और अन्य पर्वों पर तो भारी भीड़ होती है और मन्दिर - प्राङ्गण के हवन-कुण्ड की आग बुझने नहीं पाती। भजन - कीर्तन और मङ्गल - गान के कार्य-क्रम लगातार चलते रहते हैं। परम्परा से मन्दिर में औरतें ही पूजा का काम देखती हैं—यह यहाँ की एक अनूठी विशेषता है।

२. मसाढ़ का देवी-मन्दिर

आरा से ६ मील पश्चिम और कारीसाथ स्टेशन से १ मील उत्तर-पूर्व मसाढ़ नामक गाँव में प्राचीन टीलों के ऊपर एक देवी-मन्दिर है। मन्दिर से उत्तर एक तालाब है, जो पूर्व-पश्चिम को फैला है। ऐसे तालाबों में सूर्य-वेध माना है। देवी-मन्दिर से पूर्व एक बट-वृक्ष के नीचे चबूतरे पर अर्द्ध-नारीश्वर की बड़ी आकर्षक मूर्ति एक लिङ्ग में उत्कीर्ण है।

ह्एनसाङ्ग के काल में मसाढ़ एक प्रसिद्ध व्यापारिक नगर था। इस नगर का उक्त देवी-मन्दिर मगध-साम्राज्य में प्रख्यात था और अति विशाल था। बख्तियार खिलजी ने इस मन्दिर को तुड़वा दिया था। उसी मन्दिर के भग्नावशेष पर वर्तमान देवी - मन्दिर स्थित है। यहाँ नवरात्रों में मेला लगता है।

३. बाबू बाजार की दक्षिण-कालिका

आरा नगर के बाबू बाजार मुहल्ले में दक्षिण काली की स्थापना १८५७ के महान् योद्धा वीर कुँवर सिंह जी द्वारा हुई है, जो उनकी आराध्या देवी थीं। मूर्ति बहुत बड़ी नहीं है, लेकिन बहुत ही आकर्षक है। मूर्ति के समीप ही खड्ग रखा हुआ है, जो इस बात का सङ्केत देता है कि वहाँ पूजा बलि द्वारा की जाती थी। खड्ग काफी वजनदार है, एक हाथ से उठाना सम्भव नहीं। खड्ग पर सोने के रङ्ग से आँख बनी हुई है।

४. मैधरा की काली देवी

आरा-सहसराम के विक्रमगञ्ज स्टेशन से ५ मील पश्चिम मैधरा गाँव में 'काली माई' का स्थान है। पिछले ५०० वर्षों से यहाँ सामूहिक रूप से लगातार चक्र-पूजन की परम्परा विद्यमान है। 'पञ्च - बलि' आज भी यहाँ प्रचलित है। सारा गाँव 'शाक्त' है। लोक-मत है कि यहाँ निष्ठा-पूर्वक देवी की पूजा करने से सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं।

(२२)

गोपालगंज की सिंहासिनी देवी

सिवान से १७ कि. मी. उत्तर और गोपालगञ्ज से ७ कि. मी. दक्षिण थावे रेल्वे स्टेशन से १ कि. मी. की दूरी पर 'थावे' नामक स्थान है। पहले यह स्थान 'रहसु' नाम से ज्ञात था, किन्तु यहाँ भगवती के स्थायी रूप से रहने के कारण, इस स्थान का नाम 'स्थाई' पड़ गया, जो अपभ्रंश होकर 'स्थावे' बना और अब 'थावे' रह गया है। यहाँ सघन जङ्गल है, जो लगभग ६६ एकड़ में फैला है। ऐसे बीहड़ स्थान पर स्थित 'श्रीदुर्गा - मन्दिर' की अधिष्ठात्री देवी 'सिंहासिनी' नाम से प्रख्यात हैं, जिनके वर्तमान पुजारी श्री पं० हरेन्द्र पाण्डेय हैं। प्रतिमा का दाहिना पैर तो सिंह के ऊपर है और दूसरा पैर इतनी गहराई में है कि उसका पता नहीं चलता। कहा जाता है कि दो हजार वर्ष पूर्व चेरी वंश के राजा मदनसेन की प्रार्थना पर 'रहसु' नामक भक्त ने इन देवी का आवाहन किया था और देवी का आविर्भाव होते ही राजा और भक्त—दोनों को मोक्ष मिल गया। तभी से भगवती यहाँ इस प्रतिमा-रूप में विराजमान हैं।

(२३)

माँ काम-चारिणी

❀ श्री विश्वनाथानन्दनाथ जी, भटमुरना, धनबाद (बिहार)

बिहार की पवित्र धरती पर असंख्य 'सिद्ध-पीठ' हैं, जहाँ जाकर माँ का भक्त माँ के दर्शन प्राप्त करता है और अपने जीवन को सफल समझता

है। इन 'शक्ति - पीठों' में एक है—'मन्दार सिद्ध - पीठ'। यहाँ 'माँ काम-चारिणी' अपने भक्तों को दर्शन देकर धर्म - अर्थ - काम और मोक्ष प्रदान करती हैं।

माँ 'मन्दार पर्वत' पर निवास करती हैं। 'मन्दराचल पर्वत' का ही दूसरा नाम 'मन्दार' है। कहते हैं कि यह वही 'मन्दराचल पर्वत' है, जिसे मथानी बनाकर देव और दानवों ने 'समुद्र-मन्थन' किया था। यही वह पर्वत है, जिसके चारों ओर 'शेषनाग' को रस्सी के समान लपेटा गया था और समुद्र के अन्दर से १४ 'रत्न' निकाले गए थे। उन रत्नों में एक 'अमृत' भी था। यदि यह 'मन्दराचल पर्वत' न होता, तो न 'अमृत' समुद्र से निकलता, न देवता ही अमर होते।

'मन्दराचल' के दर्शन करनेवाले भक्तों को अवश्य ही यह अनुभव होता है कि यह वही पर्वत है। आज भी इस पर्वत के मध्य में उसके चारों ओर 'गोल घेरे' का दाग दिखाई देता है। लोगों का विश्वास है कि 'शेष-नाग' के लपेटने के कारण यह दाग पड़ा है और यह दाग 'समुद्र-मन्थन' के समय से ही अब तक विद्यमान है। 'सिद्ध - पीठ मन्दार' बिहार के 'बाँका' जिले में स्थित है। बिहार के सभी जिलों से यहाँ आने-जाने का प्रबन्ध है। 'भागलपुर' से रेल-लाइन भी है, जो केवल 'मन्दार-पीठ' तक ही जाती है। इस 'पीठ' के निकट ही 'बौंसी' नगर है। लोग बस या रेल द्वारा 'बौंसी' आते हैं और यहाँ से पैदल या रिक्शे द्वारा 'मन्दार - पीठ' का दर्शन करने जाते हैं।

'मन्दार' पर्वत के नीचे एक मनोरम सरोवर है। लोग उस सरोवर के जल को गङ्गा-जल-जैसा ही महत्त्व देते हैं। सरोवर में स्नान करना लोग पुण्य समझते हैं। लोगों का विश्वास है कि इस पाप-हारक सरोवर में स्नान करने से सभी पाप कट जाते हैं। यहाँ स्नान करने से शरीर के सभी रोग भी दूर हो जाते हैं। यहाँ तक कि कुष्ठ - रोगी भी रोग - मुक्त हो जाते हैं। सरोवर के उत्तर - पश्चिमी कोने में 'महा - श्मशान' है। शाक्त-साधक यहाँ रात-रात भर 'चिता-पूजन' और 'तन्त्र-साधना' करते हैं। अमावास्या की रात में तो दूर-दूर से साधक आकर इस 'महा-श्मशान' में हवन-पूजन करते हैं। श्मशान के पास से ही 'मन्दार-सिद्ध-पीठ', जहाँ माँ 'काम - चारिणी' वास करती हैं, जाने का मार्ग है। लोग माँ का नाम लेते हुए—माँ का जय-जय-कार करते हुए ऊपर चढ़ते हैं। 'मन्दराचल' विशाल पर्वत है, किन्तु

इसकी विशेषता यह है कि यह एक ही पत्थर का बना हुआ है, जो अपने रङ्ग का अकेला है। चढ़ने में कहीं तो सीढ़ी के साधन मिल जाते हैं, किन्तु कहीं वे सुलभ नहीं। यदि थोड़ी - सी असावधानी हुई, तो हजारों फीट नीचे !

पर्वत में अनेक गुफाएँ हैं। इन गुफाओं में भगवान् नृसिंह, भैरव, काली, दुर्गा इत्यादि की मूर्तियाँ हैं। प्रति-दिन उनकी पूजा प्रातः और सायं-काल होती है। भक्त लोग इन देवी-देवताओं के दर्शन कर अपने को धन्य मानते हैं। कुछ गुप्त गुफाएँ भी ऐसी हैं, जहाँ साधक, तपस्वी लोग वर्षों से तपस्या करते आ रहे हैं। पर्वत के मध्य ही में 'माँ काम-चारिणी' के दर्शन मिल जाते हैं। खुले आकाश के नीचे माँ निवास करती हैं। शिला-मूर्ति के स्थान में माँ का 'भग-रूप' है। प्राकृतिक रूप है माँ का। 'भग - रूपी' भग-वती ही 'मन्दार-सिद्ध-पीठ' की 'काम-चारिणी मैया' हैं।

वैशाख मास की तपती धूप हो, या पौष मास का कड़ाके का जाड़ा। भक्तों की पूजा 'माँ काम-चारिणी' सदा स्वीकार करती हैं और अपने पुत्रों को अभय-वर-दान करती हैं। भोग और मोक्ष दोनों देती हैं। 'माँ काम-चारिणी' के दर्शन सभी भक्तों को करने चाहिए।

(२४)

माँ लिलौरी

बिहार की धरती अपनी सम्पदा और गौरव के कारण पूरे देश में प्रसिद्ध है। यहाँ की धरती को प्रकृति युग-युग से सँवारती आ रही है और आज भी यहाँ की धरती के कण-कण का शृङ्गार कर उसकी आरती उता-रती है। यही कारण है कि यहाँ की धरती देश को मुक्त - हस्त से दान कर सम्पन्न बनाने में लगी है। यहाँ की धरती में स्वयं भगवती भिन्न-भिन्न रूपों में एक रूप है—माँ लिलौरी का। प्रति-दिन यहाँ माँ के हजारों भक्त-गण आते हैं और माँ के पावन चरणों में श्रद्धा-सुमन चढ़ाते हैं। माँ की जय-जय-कार के नारों से मन्दिर का कोना-कोना गूँज उठता है।

माँ लिलौरी को भक्त-गण भक्ति-भाव से 'नील-कण्ठ-वासिनी' के नाम से भी पुकारते हैं। माँ का यह पावन स्थान, बिहार के धनबाद जिले के

अन्तर्गत कतरासगढ़ से दो कि० मी० की दूरी पर है। वहाँ जाने के लिए बस, कार, टमटम तथा रिक्शे का उत्तम प्रबन्ध है। माँ का भव्य प्राचीन मन्दिर, हरे-भरे पलाश के जङ्गल में भक्तों को दूर से ही दिखाई पड़ता है। मन्दिर के सामने नदी का कल-कल करता हुआ जल, माँ लिलौरी के चरणों को पखारते हुए दिन-रात बहता है। जो भी भक्त - गण यहाँ माँ की पूजा करने आते हैं, वे पहले नदी के निर्मल जल में स्नान करते हैं। मन्दिर के चारों तरफ बड़े-बड़े वृक्ष हैं, जिनकी छाया में फूल और प्रसाद बेचनेवाले लोग माँ के भक्तों की सेवा करते हैं। माँ का मन्दिर बहुत पुराना है। कहा जाता है कि कतरास राज्य के राजा ने इस मन्दिर को बनवाया था। आज भी राज-परिवार के द्वारा ही मन्दिर का रख-रखाव होता है।

मन्दिर के अन्दर माँ का विशाल पिण्ड है, जो फूलों से ढँका रहता है। कहते हैं कि इस पिण्ड के अन्दर माँ लिलौरी का विग्रह है। मन्दिर के सामने के प्राङ्गण में 'बलि-स्थान' है। प्रति-दिन पूजन के बाद 'छाग'-बलि का विधान है। कभी-कभी यहाँ सैकड़ों 'छाग - बलि' होती है। यात्रियों के लिए अब यहाँ कई 'विश्रामालय' भी बन गए हैं। माँ की पूजा करने के बाद लोग स्वयं 'विश्रामालय' में भोजन बनाते हैं और शाम को चले जाते हैं शाम को 'आरती' के बाद यहाँ कोई नहीं रहता। चारों ओर घना अन्धकार छा जाता है और माँ का स्थान वृक्षों के बीच भय-सा उत्पन्न करने लगता है। निकट स्थित श्मशान की चिता की लपटों से साधारण जन को भी भय का सञ्चार होता है। अमावास्या की रात्रि में, शाक्त-साधक कभी-कभी यहाँ दिखाई पड़ जाते हैं।

माँ लिलौरी का स्थान एक जाग्रत् स्थान है, जहाँ भक्तों की मनो-कामना पूर्ण होती है। शाक्त-साधकों के लिए यह स्थान अपने आप में एक 'सिद्ध-पीठ' है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि अभी जहाँ माँ का मन्दिर है, वहाँ एक समय श्मशान ही था। श्मशान को अब माँ के मन्दिर से अलग कुछ दूरी पर निश्चित कर दिया गया है। श्मशान में दिन-रात चिताएँ जलती हैं। आस-पास के लोग शव - दाह भी करते हैं और माँ लिलौरी का दर्शन भी। जगत्-जननी परमेश्वरी का स्थान प्राकृतिक सुन्दरता की गोद में अपूर्व है। सभी शाक्त-साधकों और माँ के भक्तों को माँ लिलौरी का दर्शन करना चाहिए और माँ की दया को प्राप्त कर जीवन धन्य करना चाहिए।

(२५)

पूर्णिया की पूरण देवी

❀ प्रो० कैलाशनाथ तिवारी

सांस्कृतिक दृष्टि से 'बिहार' का 'पूर्णिया' जनपद अविभाजित 'बङ्गाल' और 'मिथिला' का सन्धि - स्थल रहा है। इन दोनों भू - खण्डों में सदियों से शक्ति-पूजा की प्रधानता रही है, जो आज भी व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन हो चुकने पर भी अक्षुण्ण है। यही कारण है कि पूर्णिया-क्षेत्र में देवी-देवताओं के जितने प्राचीन मन्दिर विद्यमान हैं, उनमें देवी - मन्दिरों की संख्या अनुमानतः अधिक है। विशिष्ट देवी - स्थानों में सर्वाधिक प्रतिष्ठित, पूजनीय और जाग्रत् प्रतिमा है - माँ पूरण देवी की। इनकी कृपा से अश्रु-पूरित नयनों में हँसी का उजास फैलते देर नहीं लगती। चाहिए केवल अखण्ड विश्वास, असीम श्रद्धा और अटूट समर्पण-भाव। माँ सबकी मनो-कामना पूर्ण करती हैं। इसी से ये 'पूरण देवी' नाम से प्रसिद्ध हैं। इस नाम की एक और महिमा है। शास्त्रों में महा - विद्या के जो दस रूप – काली, तारा, षोडशी आदि वर्णित हैं, वे सभी इस प्रतिमा में उत्कीर्ण हैं। अतः इनका नाम 'पूर्ण देवी' अथवा 'पूरण देवी' पड़ा। पूरे भारत में इस प्रकार की विलक्षण प्रतिमा कदाचित् अन्यत्र नहीं है।

पूरण देवी के आविर्भाव की कथा

पूर्णिया मुख्यालय से प्रायः सात किलोमीटर पूर्वोत्तर पूर्णिया नगर में स्थित पूरण देवी के आविर्भाव की कथा सुदूर अतीत के कुहरे में आच्छन्न है। कहते हैं, पूरण देवी की शिलाकार मूर्ति पृथ्वी के गर्भ में दबी पड़ी थी। मुगलों का शासन था। शौकत जङ्ग नवाब थे। मन्दिर से तीन-चार किलो-मीटर उत्तर 'नवाबबारी' ग्राम में उनका जीर्ण-शीर्ण किला आज भी मुगल-कालीन वैभव एवं क्रूरता की कहानी सुना रहा है। जहाँ मूर्ति दबी हुई थी, उसके पास ही सिद्ध-योगी 'हठीनाथ' तपस्या-रत थे। देवी ने उन्हें स्वप्न में दर्शन दिए और कहा कि 'पोखर के नीचे से मेरी प्रतिमा निकालकर प्रति-ष्ठित करो।' फलतः मन्दिर के पीछे वर्तमान पोखर से विग्रह को निकाला तथा अधिष्ठित किया गया। मन्दिर के दक्षिण भाग में अवस्थित 'पञ्च-मुखी शिव' पर जल चढ़ाकर बाबा 'पूरण देवी' की आराधना करते थे।

उन दिनों यहाँ से कुछ दूर पश्चिम में 'सौरा' (कोशी नदी की शाखा) की धारा बहती थी। अब सूख - सी गई है, पर परिरेखा मिटी नहीं है। 'हठी बाबा' नित्य वहीं स्नान कर पञ्च-धातु से निर्मित लँगोटा पहनते थे, जिसे अग्नि - कुण्ड में तपाकर लाल किया जाता था। एक दिन वे नदी के किनारे दातुन कर रहे थे। तभी नवाब का पीलवान (महावत) आया और अपने हाथी को वहीं नहलाना चाहा, जहाँ 'हठीनाथ' नित्य स्नान करते थे। बाबा ने हाथी दूसरी जगह ले जाने को कहा, लेकिन उसने न केवल उनके आदेश की अनसुनी कर दी, बल्कि उन पर हाथी हुलका दिया। फिर तो बाबा आवेश में आ गए और हाथी के दोनों दाँत उखाड़ दिए। क्षण - मात्र में वह पर-लोक सिधार गया। पीलवान भी नौ - दो ग्यारह हो गया और नवाब को सारी घटना कह सुनाई। सुनते ही वह आग-बबूला हो गया और उसने प्रतिशोध लेने के लिए हुक्म दिया कि फकीर के पास फौरन जायके-दार पकवान भेजा जाय।

बाबा उस समय पूजा पर बैठे थे। पूजा समाप्त होते ही उनके सामने कपड़े से ढँकी एक टोकरी रखी गई, पर कपड़ा हटाते ही संवाहक यह देखकर विस्मित हो गया कि पकवान के स्थान पर केवल उड़हुल के फूल थे। 'बाबा हठीनाथ' तपोबल से जान चुके थे कि टोकरी में अभक्ष्य पदार्थ हैं। उन्होंने हँसते हुए कहा कि 'मेरी ओर से भी कुछ सन्देश लेते जाओ।' इतना कहते ही वे सारे फूल लड्डू में बदल गए। नवाब को बड़ी ग्लानि हुई कि उसने अभक्ष्य वस्तु भेजकर एक पहुँचे हुए सन्त का अपमान किया है। अतः वे अपनी बेगम और कुछ सिपाहियों के साथ क्षमा - याचना हेतु बाबा की कुटिया पहुँचे। हठीनाथ ने अविलम्ब उन्हें क्षमा कर दिया। नवाब ने उन्हें कुछ धन देना चाहा, पर साधु को धन की क्या चाह ! फिर भी नवाब ने एक ताम्र - पत्र पर दस हजार रुपए की जमीन्दारी अर्पित कर दी।

उत्तराञ्चल का पावन-स्थल : 'पूरण देवी'

बाबा हठीनाथ का जञ्जीर - युक्त लँगोटा, शङ्ख, आसन इत्यादि मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम भाग में आज भी दर्शनीय हैं। हाथी के जो दाँत उन्होंने उखाड़े थे, उनसे निर्मित सिंहासन भी विद्यमान है। सबसे आश्चर्य-जनक बात यह है कि रात्रि में 'शिवा-बलि' के समय एक जोड़ा सियार नित्य आते हैं और बलि को ग्रहण कर लौट जाते हैं !

हठी बाबा के बाद मन्दिर की व्यवस्था क्रमशः ढीली पड़ने लगी। समुचित देख-रेख के अभाव में नवाब शौकत जङ्ग द्वारा प्रदत्त ताम्र - पत्र लुप्त हो गया। बँगला - देशी घुसपैठियों तथा स्थानीय लोगों ने मन्दिर की जमीन हड़प ली ! मन्दिर भी क्षति-ग्रस्त होने लगा है। दक्षिणी परिसर तो अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण है। मन्दिर तक जानेवाली सड़क टूट - फूट चुकी है। पिछले दशक से जिला प्रशासन तथा 'कौल भक्तों' का इस ओर ध्यान गया है और 'पूरण देवी ट्रस्ट' के तत्त्वावधान में भवन-मरम्मत, सौन्दर्यीकरण तथा अन्य विकास-कार्यों की दिशा में प्रयास किए जा रहे हैं।

(२६)

श्रीबगलास्थान : गया

'गया' के उत्तरी छोर पर 'राम - शिला' पर्वत के निकट, बड़ी रेल-लाइन के किनारे 'श्रीबगला-मुखी' का मन्दिर है, जिसमें शवासना चतुर्भुजी 'बगला' की अष्ट-धातु की मूर्ति, मेरु-पृष्ठ पर 'श्रीबगला-ब्रह्मास्त्र-सहस्र-दल यन्त्र' पत्थर पर उत्कीर्ण है। प्रत्येक दल पर 'मातृका' और 'बीज - मन्त्र' खुदे हैं। भगवान् भैरव और शिव-मन्दिर हैं। प्रत्येक मङ्गलवार को दर्शनार्थियों का मेला लगता है। सतत अनुष्ठान, जप, हवन, दीप-दान की प्रक्रियाएँ चलती रहती हैं। पर्यटन-स्थलों की सूची में इसका तीसरा स्थान है। 'बगला-स्थान' के नाम से यह मन्दिर प्रसिद्ध है।

इस मन्दिर की स्थापना 'तन्त्र-शिरोमणि' स्व० श्री भवानीनन्द मिश्र द्वारा चैत्र शुक्ला प्रतिपदा सम्वत् १९९१ को हुई थी। वे एक सिद्ध पुरुष थे। वे वर्तमान बिहार-प्रदेश के 'बक्सर'-जनपद के अन्तर्गत 'डुमराँव' के निवासी थे। अपने निवास-स्थल में उन्होंने 'सिंह-वाहिनी' श्री राजेश्वरी की सुन्दर सङ्गमरमर की मूर्ति की स्थापना की थी, जिनके साथ 'श्रीतारा' और 'श्रीबगला' तथा 'पञ्च-भैरव' की प्रस्तर प्रतिमाएँ भी स्थापित हैं।

साठ वर्षों के बाद 'बगला स्थान मन्दिर' का जीर्णोद्धार एवं सौन्दर्यीकरण का कार्य पुनः धूम-धाम से हो रहा है। इसके अन्तर्गत श्रीभैरव जी की एक नव-निर्मित मूर्ति की स्थापना हो चुकी है।

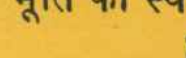

बिहार में शक्ति-साधना

(पूर्वार्द्ध खण्ड)

इतिहास एवं प्रेरणा-दायक व्यक्तित्व

मूल्य १०.०० रु०